Chapter-8

अष्टम् अध्याय

वर्मा जी की कहानियाँ

(क) वस्तु

(ख) शिल्प

<u>उपन्यास और कहानी</u> :- कहानी और उपन्यास में पर्याप्त समानता है। दोनों में ही मानव-जीवन का चित्र एक या अनेक कथाओं से अंकित किया जाता है और दोनों के मूल तत्वों में भी विशेष अन्तर नहीं है। फिर भी उपन्यास और कहानी में कुछ अन्तर भी अवश्य है। सबसे स्थूल भेद तो आकार का ही है। छोटे-से-छोटा छोटा उपन्यास भी लम्बी कहानी से बड़ा ही होगा। उपन्यास में मानव-जीवन के विविध पक्षों का अंकन होता है। 'उपन्यास समाज की पृष्ठभूमि में किसी भी व्यक्ति के पूर्ण जीवन का वर्णन करता है जब कि कहानी जीवन के किसी अवसर-विशेष का ही चित्र उपस्थित करती है।'[1] इस बात को अधिक कलात्मक एवं आलंकारिक ढंग से समझाते हुए एक समीक्षक ने लिखा है -'यदि बंद दरवाजे के भीतर से एक छोटे से छिद्र के सहारे, बाहर के किसी उपवन में ताका जाय तो गुलाबों का एक राजा अपनी हरी-हरी डाल पर मस्ती से झूमता दिखाई पड़ेगा। वह अपनी उत्फुल्लता और कोमल रमणीयता में आपूर्ण खिला मिलेगा। इसके उपरान्त यदि दर्वाजा पूरा खोल दिया जाय तो विशाल उपवन का मनोहर दृश्य सामने खुल पड़ेगा। अवश्य ही उस उपवन के व्यापक प्रसार में वह गुलाब भी एक तरफ दिखाई पड़ेगा। इस उदाहरण में छिद्र के माध्यम से दिखाई पड़नेवाला गुलाब, कहानी के रूप में कहा जायगा और उपवन की दिव्य सामूहिकता उपन्यास की प्रतिनिधि मानी जायगी।'[2] क्षेत्र और समय की यह व्यापकता उपन्यास के लिए अनिवार्य नहीं रह गयी है क्योंकि आज एक रात या छोटे-से-छोटे कालखण्ड और अत्यंत सीमित क्षेत्र को लेकर उपन्यासों में नित्य-नवीन प्रयोग हो रहे हैं किन्तु वहाँ भी एक प्रकार की विस्तृति तो आ ही जाती है। किसी एक व्यक्ति के छोटे-से समय के अनुभव, विचार-प्रवाह, मनोविश्लेषण आदि को सूक्ष्म निरीक्षण के आधार पर विस्तार से प्रस्तुत करना पड़ता है और उपन्यास कहानी से अलग हो जाता है।

उपन्यास और कहानी के इस आकारगत वैभिन्य के अतिरिक्त दोनों के कला-सौष्ठव में भी अन्तर होता है। डॉ० भगीरथ मिश्र का कथन है -'तत्व की दृष्टि से यद्यपि उपन्यास और कहानी में मौलिक भेद नहीं है, पर एक की कला पूर्ण विवरण में है और दूसरे की संक्षिप्त में। कहानीकार कथोपकथन, वर्णन, पात्र आदि में किसी एक प्रकाशन के साधन से संतुष्ट हो सकता है, परन्तु उपन्यासकार केवल एक से ही काम नहीं चला सकता।'[3] इतना ही

1- काव्यशास्त्र- डा० भगीरथ मिश्र-पृष्ठ-98

2- कहानी का रचना विधान-डा० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, पृ० 17

3- ~~धर्मयुग-25 अगस्त, 1963 पृ० 17~~

3- काव्यशास्त्र - डॉ० भगीरथ मिश्र, पृ- 98

यहीं यदि कोई कहानीकार कहानी कहने के लिए उपन्यास के सभी तत्वों का उपयोग एक साथ करता है तो भी उनमें अंतर होता है। उपन्यास और कहानी के कथानक, चरित्र-चित्रण, देशकाल आदि तत्वों में पर्याप्त वैभिन्न्य होता है जिसकी चर्चा आगे की जायेगी।

कहानी और उपन्यास जिस बिन्दु पर सर्वथा पृथक् दिखते हैं, वह है उनकी प्रभावान्विति। उपन्यास अपनी व्यापकता के कारण जीवन की अनेक समस्याओं के चित्रण के द्वारा सम्पूर्ण जीवन-चित्र का प्रभाव डालता है, जबकि कहानी एक ही समस्या के सघन प्रभाव के रूप में पाठक के मन प्राण को भिगो जाती है। कहानीकार विभिन्न तत्वों को इस प्रकार प्रयुक्त करता है कि उसे कहानी के उद्देश्य की उपलब्धि शीघ्रातिशीघ्र हो और इस उद्देश्य की पूर्ति होते ही कहानीकार का कार्य समाप्त हो जाता है।

निष्कर्ष-रूप में कहा जा सकता है कि कहानी और उपन्यास में आकार गत अंतर के साथ-साथ तात्विक अंतर भी होता है। इसी तथ्य को दृष्टि में रखते हुए हमने वर्मा जी की कहानियों का विवेचन उपन्यासों से पृथक् रखकर किया है। इस अध्याय में वर्मा जी की कहानियों का अध्ययन दो भागों विभाजित करके किया जाएगा। वर्मा जी की कहानियों का वस्तुगत परिचय देने के उपरान्त हम उनकी कहानियों की शिल्पगत विशेषताओं का संक्षिप्त विवेचन करेंगे।

वर्मा जी ने कथा-साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश कहानी-लेखन से ही किया। उनकी पहली कहानी 'हिन्दी मनोरंजन' में प्रकाशित हुई थी[1] इसके पूर्व वर्मा जी अपनी किशोरावस्था में ही एक कवि के रूप में प्रसिद्ध हो गये थे - इसका उल्लेख अन्यत्र किया जा चुका है। पं० विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' की प्रेरणा से वर्मा जी ने उनके ही कहानी-पत्रिका में वर्मा जी ने बहुत-सी कहानियाँ लिखीं किन्तु वे कहानियाँ आज दुर्लभ हैं। इस विषय में स्वयं वर्मा जी का कथन द्रष्टव्य है -'कौशिक जी ने कानपुर में 'हिन्दी मनोरंजन' नाम का एक कहानी-मासिक निकाला था, मैं उसमें न जाने कितनी कहानियाँ लिखीं। वह कहानिया अब खो गयी हैं, या मैंने उन्हें स्वयं ही खो दिया है। अपरिपक्व अवस्था में प्रयोग के तौर से लिखी कहानियाँ थीं वह सब।'[2] वर्मा जी के साहित्यिक-जीवन के उषाकाल की स्मृति के रूप में इन कहानियों का महत्व अवश्य है किन्तु उनके अनुपलब्ध होने के कारण हम वर्मा जी

1- कथा भारती (कहानी संग्रह) सं० भगवतीप्रसाद वाजपेयी, पृ० 102

2- धर्मयुग 25 अगस्त, 1963 पृ० 17

के कहानी-संग्रहों में प्रकाशित कहानियों को ही अपने अध्ययन का आधार बनायेंगे ।

वर्मा जी की कुछ कहानियाँ इतनी प्रसिद्ध हुई हैं कि हिन्दी साहित्य का अति सामान्य पाठक भी उनकी प्रायश्चित, दो बाँके, विक्टोरिया क्रास आदि कहानियों से अवश्य परिचित होता है । वर्मा जी को कहानीकार के रूप में पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त हुई, किन्तु धीरे-धीरे वर्मा जी का ध्यान उपन्यास की ओर अधिक केन्द्रित होता गया । परिणामत: उपन्यासकार वर्मा जी की कीर्तिचन्द्रिका साहित्याकाश में प्रसरित होती गयी और कहानीकार वर्मा जी का दैदीप्यमान नक्षत्र उस चन्द्रिका के तीव्र प्रकाश के समक्ष धूमिल होने लगा। इधर `सारिका` में प्रकाशित उनकी कहानियों ने एक बार पुन: पाठक को उनके कहानीकार के रूप का स्मरण करा दिया है । बहुत पहले लिखी गयीं कुछ कहानियाँ आज भी वर्मा जी को एक कहानीकार के रूप में हिन्दी साहित्य के अधिकांश इतिहास -संग्रहों तथा [redacted] कहानी-संग्रहों में महत्वपूर्ण स्थान दिलवाए हुए हैं । तथापि उनके कहानीकार की प्रगति एक लम्बी अवधि के लिए अवरुद्ध हो गयी थी इसमें सन्देह नहीं । संभवत इसीलिए एक समीक्षक ने अपने ग्रंथ में `कुछ अन्य महत्वपूर्ण कहानी लेखक` के बीच वर्मा जी का नामोल्लेख करते हुए भी लिखा है -`पहले से लिखते आ रहे लेखकों में वर्मा जी का नामोल्लेख करना एक ऐतिहासिक क्रम का निर्वाह करना ही है, अन्यथा सम्प्रति उन्होंने अपनी सारी चेतना उपन्यासों के सृजन में लगा दी है । संभवत: समस्याओं का उनका बोध इतना व्यापक है कि वह `कहानी` की परिधि में समाविष्ट नहीं हो सकता ।`[1]

वर्मा जी ने बड़े स्पष्ट एवं निर्भीक शब्दों में स्वीकार किया है कि साहित्य-सृजन के पीछे उनका एक उद्देश्य जीविकोपार्जन भी है, संभवत: इसीलिए उन्होंने कहानी की अपेक्षा उपन्यास को ही अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है । कहानी-संग्रहों की अपेक्षा उपन्यासों की `मार्केट वैल्यू` अधिक है, यह सर्वविदित है । फिर भी , दूसरे कहानीकारों की तुलना में बहुत कम कहानियाँ लिखने पर भी उनकी कहानियों की लोकप्रियता उनके कहानी-लेखन के वैशिष्ट्य को ही प्रकट करती है । इस पर आगे यथास्थान विस्तार से विचार किया जायेगा ।

वर्मा जी ने अपनी कहानियों में व्यक्ति और समाज के संघर्ष को मुखरित किया है,

---

1- हिन्दी कहानी की रचना-प्रक्रिया- डा० परमानंद श्रीवास्तव, पृ० 107

इसी कारण उनकी कहानियों में व्यक्ति की कुंठा, अनास्था और विकृतियों से उद्भूत समस्याएँ भी हैं और समाज के अत्याचार, रूढ़िग्रस्त मान्यताओं तथा परस्पर भेदभाव के प्रति विद्रोह की भावना भी है। जिस समाज में उन्हें अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए घनघोर संघर्ष करना पड़ा, समाज की विकृतियों एवं कुरीतियों से लड़ना पड़ा हो, उस समाज के लिए उनमें एक कटु आक्रोश और अनास्था की भावना है।

बहुत पहले वर्मा जी के तीन कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए थे - इन्स्टालमेण्ट(सन् 1935), दो बाँके(सन् 1936) तथा राख और चिनगारी (सन् 1950। इनमें से 'राख और चिनगारी' अब अप्राप्य है क्योंकि उसके संस्करण वर्मा जी ने रोक दिए थे।[1] इन तीनों संग्रहों की कहानियों को वर्मा जी ने अब 'मेरी कहानियाँ' (सन् 1971) नामक कहानी-संग्रह में एक साथ प्रकाशित करवा दिया है। इधर उनकी 12 कहानियाँ 'सारिका' में प्रकाशित हुई हैं। इन सब कहानियों का परिचय यहाँ प्रस्तुत है -

वस्तु

प्रेजेण्ट्स :- इस कहानी में नारी मन की कुण्ठा को अभिव्यक्ति मिली है। प्रत्येक नारी के मन में विवाह करके पारिवारिक जीवन के सुख को भोगने की इच्छा स्वाभाविक रूप से रहती है, किन्तु कभी-कभी पुरुष की कामक्रीड़ा की प्रवृत्ति किसी नारी के जीवन को कितना उपहासात्मक बना देती है और उसका जीवन विलास-क्रीडाओं में उलझकर कैसा विद्रूप उत्पन्न करता है - इसी विषय को कहानी का आधार बनाया गया है।

परमेश्वरी बाबू का परिचय एक ऐसी महिला शशिबाला से हो जाता है, जो अपनी अधेड़ अवस्था में भी बन-सँवरकर आकर्षक दिखने की चेष्टा करती थीं और पुरुषों से किसी-न-किसी बहाने मित्रता कर लेने में पटु थी। परमेश्वरी बाबू बहुत जल्दी शशिबाला से इतने घनिष्ठ हो जाते हैं कि उनकी रातें भी शशिबाला के घर बीतने लगती हैं। एक दिन सवेरे शशिबाला की अनुपस्थिति में उनका ध्यान कमरे में रखी प्रत्येक वस्तु पर जाता है जिन पर पृथक्-पृथक् व्यक्तियों के नाम की चिटें चिपकी हुई थीं। परमेश्वरी बाबू जब इस विषय में अपनी जिज्ञासा शशिबाला के समक्ष रखते हैं तो शशिबाला अपने जीवन की मार्मिक-कथा का रहस्योद्घाटन करती हैं। शशिबाला कभी विवाह करने की प्रबल इच्छा रखती थीं किन्तु उनके जीवन में जो भी व्यक्ति आया उसने अनेक सुख-स्वप्न उनके सामने सजाये और शशिबाला ने

1- वर्मा जी के 21-8-74 के पत्र के आधार पर।

भ्रमवश उसे भावी पति के रूप में देखा किन्तु वह प्रत्येक व्यक्ति उन्हें प्रेजेण्ट देकर चला गया, विवाह नहीं कर सका। धीरे-धीरे शशिबाला को पुरुष की वास्तविकता का ज्ञान हो गया और उन्होंने भी हृदय का खेल छोड़ भोग-विलास के खेल को खुलकर खेलना प्रारम्भ कर दिया। वह अपने जीवन में आए प्रत्येक व्यक्ति के प्रेजेण्ट को एक स्मृति-चिन्ह के रूप में समेटकर रखने लगीं। उनके प्रेजेण्ट्स की संख्या में निरंतर वृद्धि होती गयी लेकिन परमेश्वरी बाबू उन्हें एक ऐसा अपि अप्रतिम प्रेजेण्ट देने की घोषणा करते हैं जो उनके सपके बुढ़ापे और असहाय जीवन में काम आ सके। परमेश्वरी बाबू उनके सभी प्रेजेण्ट्स को वृद्धावस्था में खरीद लेने का वचन देते हैं ताकि उस समय शशिबाला इन स्मृति चिन्हों की जलन से बच सकें और इनके बदले पायी गयी धन-राशि से अपना जीवन यापन कर सकें। प्रस्तुत कहानी का सौन्दर्य यही है कि एक ओर तो शशिबाला का उच्छृंखल चरित्र व्यंग्य की सृष्टि करता है वहीं दूसरी ओर उनकी जैसी स्त्रियों के प्रति सहानुभूति भी उत्पन्न होती है और कामी पुरुषों की सद्-असद् वृत्ति पर दृष्टिपात भी करता है।

<u>अर्थपिशाच</u> :- प्रस्तुत कहानी एक ऐसे करोड़पति की कहानी है जिसमें जिसने अपनी सारी जिंदगी गरीबों का शोषण करके सम्पत्ति एकत्रित करने में बितायी। वही अथाह सम्पत्ति उस करोड़पति को अंतिम अवस्था में उसे दु:स्वप्नों की भाँति डराने लगी। वृद्ध पूँजीपति इस सम्पत्ति का भोग करने के लिए और अधिक जीना चाहता है तथा जीने के लिए अपनी आधी सम्पत्ति डाक्टर को दे देने की इच्छा व्यक्त करता है। इस वृद्ध ने जिन व्यक्तियों को धोखा दे-देकर उनकी सम्पत्ति हड़प ध ली थी, मिलों में मजदूरों को कम मजदूरी देकर तड़पाया था, उन सबकी स्मृति-छाया उसे भयभीत करती हैं। इस प्रकार अनैतिक ढंग से एकत्रित की गई सम्पत्ति उसे चैन से मरने भी नहीं देती।

लोक-विश्वास है कि लोभी व्यक्ति मर जाता है किन्तु उसकी अतृप्त आत्मा नागयोनि धारण करके अपनी सम्पत्ति की रक्षा किया करती है, इसी विश्वास को व्यक्त करते हुए भगवतीबाबू ने कहानी के अंत में दिखाया है कि एक सर्प उस आलमारी में प्रविष्ठ हो जाता है जिसमें वृद्ध करोड़पति की सम्पत्ति रखी हुई थी।

इस कहानी में इस सत्य की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है कि ऐसे अर्थलोभी समाज के लिए अर्थपिशाच ही है जिनकी मनुष्यता का ही अपहरण अर्थ ने कर लिया है।

<u>वरना हम भी आदमी थे काम के</u> :-

प्रस्तुत कहानी को एक उर्दू कवि का रेखाचित्र कहा जा सकता है। इसमें एक ऐसे

कवि का चित्रण वर्मा जी ने किया है जिन्होंने कविता को अपने जीवन में उतार लिया है। मियाँ एक राहत का कोई संग्रह तो कभी प्रकाशित नहीं हुआ और न कभी प्रकाशित होने होने की कोई आशा ही थी क्योंकि वह एक सामान्य से पुलिस कांस्टेबिल थे और परिवार की आर्थिक उलझनों में उन्हें इतना अवकाश कहाँ था कि वह अपनी कविताओं को प्रकाशित करने का यत्न करते। उनके जीवन का उद्देश्य तो सौन्दर्य से प्रेरित होकर अपने भावों को अभिव्यक्ति प्रदान करना था, रोटी-रोज़ी की समस्याओं से संघर्ष करते एक निम्नमध्यवर्गीय व्यक्ति में इतनी क्षमता कहाँ हो सकती है कि वह एक विख्यात कवि बनने का दावा कर सके। बड़े-बड़े साहित्यकारों के समान उन्हें साहित्य-सृजन की सुविधाएँ कहाँ उपलब्ध होतीं, वह तो सड़क के चौराहे पर बैठकर सवारियों को दिशा निर्देश करते हुए कविताएँ लिख लिया करते थे।

एक बार उन्हें एक सुन्दर युवती को कांग्रेसी कार्यकर्ता होने के अपराध में गिरफ्तार करना पड़ा- इस घटना से उन्हें इतना सदमा लगा कि वह अपनी नौकरी से त्यागपत्र देकर चले आए इसके कारण उन्हें अपनी पत्नी की भर्त्सना का भी सामना करना पड़ा। लेकिन कवि जैसा भावुक प्राणी ऐसे संघर्षों से तो नित्य ही उलझता रहता है। क्रूर समाज के नियमों के क समक्ष व्यक्ति कितना विवश है - इसी तथ्य की ओर कहानीकार भगवतीबाबू ने कटाक्ष किया है।

<u>बेकारी का अभिशाप :-</u> देश की स्वतंत्रता के लिए कांग्रेसी नेता जेल भेजे जा रहे थे। जेलों में इनका कार्य देश के मजदूरों और किसानों की स्थिति पर विचार करना और अपने मार्मिक लेखों से दरिद्र जनता को कर्तव्यों का ज्ञान कराना था किन्तु वह जिस मध्यवर्ग से सम्बंधित थे उसकी समस्याओं पर उनका ध्यान नहीं जाता था। ऐसे ही चार नेताओं की भेंट जेल में एक ऐसे कैदी से होती है जो चोरी के अपराध में गिरफ्तार किया गया था।

कैदी ललितमोहन के पिता अच्छी नौकरी में थे, उन्होंने अपने चारों पुत्रों को अच्छी शिक्षा दिलाने के लिए अधिक से अधिक धन व्यय किया था किन्तु ये चारों युवक बेकारी के अभिशाप के कारण नष्ट हो गये। सबसे बड़े भाई नौकरी की चिंता के कारण तपेदिक से ग्रस्त हो जाते है। दूसरा भाई बड़े परिवार को चलाने और जीविका के लिए दौड़-धूप करने के कारण इतना वेदना-विह्वल हो जाता है कि आत्महत्या कर लेता है। तीसरा भाई एम० ए० होने पर भी पचीस तीस रुपये की नौकरी करने के लिए तैयार था किन्तु ऐसे स्थानों पर उन्हें यह कहकर निराश कर दिया जाता था कि वह इतने कम वेतन पर

अधिक दिन तक रुकेंगे नहीं । सब तरफ से निराश दोनों छोटे भाई कुलीगिरी करने के लिए भी तैयार हो गये किन्तु वहाँ भी उनकी वास्तविकता की उपेक्षा कर उन्हें कुलियों ने टिकने नहीं दिया । तीसरे भाई कृष्ण मोहन ने पढ़ते समय विलायत जाने के स्वप्न देखे थे किन्तु इसके विपरीत जीविका का कोई साधन न मिलने पर वह पागल हो जाते हैं । चौथा भाई घर के सदस्यों का पेट भरने के लिए पुन: नौकरी के लिए यत्नशील होता है । अपने एक संपन्न रिश्तेदार के यहाँ शादी में सम्मिलित होने इसलिए जाता है कि उनसे नौकरी के लिए प्रार्थना करेगा किन्तु वहाँ अपनी चिंतनीय आर्थिक स्थिति से विवश होकर चोरी कर बैठता है । परिस्थितियाँ, समाज की दूषित अर्थ-प्रणाली, और उसमें व्यक्ति की दयनीयता मनुष्य को घृणित दुष्कर्म करने के लिए बाध्य कर देती हैं यही प्रस्तुत कहानी का प्रतिपाद्य है ।

<u>कुँवर साहब मर गये :-</u> अर्थ इतना प्रबल तत्व है कि वह मनुष्य को स्वाभिमान और स्वेच्छा के मार्ग से किस प्रकार पथभ्रष्ट कर देता है - इसी समस्या को आधार बनाकर वर्मा जी ने धनाढ्य लोगों की विलासी प्रवृत्ति पर व्यंग्य किया है । ऐसा नहीं है कि इन सम्पन्न व्यक्तियों में संवेदना और आत्म-सम्मान की वृत्ति का सर्वथा अभाव ही होता है किन्तु अपने ऐश्वर्य और भोगविलास में ये इतना डूबे रहते हैं कि उन्हें अपने चारों ओर के वातावरण की ओर दृष्टिपात करने का अवकाश ही नहीं मिलता, जब भूले भटके उन्हें सामाजिक स्थिति का सामना करना भी पड़ जाता है तो वे कर्तव्य से विमुख होकर पुन: अपने क्रियाकलाप में व्यस्त हो जाते हैं ।

कुंवर कमल नारायण शराब खरीदने के लिए बाजार जाते हैं वहाँ स्वतंत्रता-सेनानी कांग्रेसियों के जुलूस में फँस जाते हैं । जुलूस के लोगों द्वारा मजाक उड़ाये जाने पर उन्हें एक क्षण के लिए कर्तव्य का आभास होता है और वह पुलिस कप्तान को निहत्थे कांग्रेसियों पर लाठी बरसाने से रोकते हैं किन्तु नया-नया पुलिस कप्तान जो कुँवर साहब को पहचानता नहीं था, उन्हें बड़ी उपेक्षा से उत्तर दे देता है । इस पर कुपित होकर कुँवर साहब भी कांग्रेसियों की तरह `महात्मा गांधी की जय` बोलने लगते हैं और कप्तान उन्हें भी गिर-फ्तार कर लेता है । कुँवर साहब को जब पता चलता है कि कांग्रेस वाले शराब की दुकान पर भी धरना देनेवाले थे तो उन्हें अपनी गल्ती का पता चलता है वह पुन: घर आकर अपने भोग-विलास में डूब जाते हैं । कुँवर साहब के कांग्रेसी मित्रों को जब उनके छूटने की सूचना समाचार-पत्र द्वारा मिलती है तो वह उनसे देशभक्ति का मार्ग छोड़ने का कारण पूछने जाते हैं । तब कुँवर साहब उन्हें यह कहलाकर लौटा देते हैं कि `कुँवर साहब मर गये` ; क्योंकि

उन्हें यह स्वीकार नहीं था कि उन्हें उस समय कोई छेड़े जब वह शराब के रंग में डूबे हों और उनकी दृष्टि युवा मालिन के सौन्दर्य का पान कर रही हो ।

प्रस्तुत कहानी में स्वतंत्रता-संग्राम के समय का चित्रण है जब एक ओर देशप्रेमी देश को स्वतंत्र कराने के लिए अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करते थे, दूसरी ओर देश का धनिक वर्ग देश की परिस्थिति से बेखबर होकर अपनी रंगीनियों में डूबा था । पूरी कहानी व्यंग्य शैली में लिखी गयी है ।

एक अनुभव :- प्रस्तुत कहानी में अर्थजनित समस्याओं से संघर्ष करती उस नारी का चित्रण है जो अपना पेट पालने के लिए वेश्या बन जाने को विवश हो जाती है । ऐसी स्त्रियों में 'नारी का सर्वश्रेष्ठ प्राकृतिक गुण लज्जा' विलुप्त हो जाता है और वह भावना-शून्य-सी होकर अपनी मजबूरी को गले से लगा लेती है । भावना के सौन्दर्य से रहित वह पशु बन जाती है इसी तथ्य को बड़ी मार्मिकता से इस कहानी में व्यक्त किया गया है -'रुपया मनुष्य को पशु बना सकता है । रुपये के वास्ते मनुष्य घृणित-से-घृणित काम करने को बाध्य होता है । स्त्री का सर्वश्रेष्ठ प्राकृतिक गुण लज्जा है । मेरे सामने जो स्त्री खड़ी थी, चाँदी के कुछ टुकड़ों की आवश्यकता ने उसे इतना अधिक गिरा दिया था कि वह अपने सर्वोत्तम गुण को तिलांजलि दे चुकी थी ।'[1]

कहानी का नायक अपने कुछ मित्रों के साथ दावत खाने एक होटल में जाता है वहाँ उन लोगों की भेंट एक ऐसे व्यक्ति पृथ्वीनाथ से हो जाती है जो जमींदार और रईस थे और सुविधा और स्वच्छंदता की दृष्टि से होटलों में ठहरा करते थे । इसके अतिरिक्त उन्हें एक और आकर्षण यह था कि होटलों में अनायास ही कुछ ऐसे अनुभव प्राप्त हो जाते थे जिनकी स्मृति जीवन भर मस्तिष्क पर छायी रहती है । पृथ्वीनाथ नायक और उनके दोस्तों को अपने जीवन का एक ऐसा ही अनुभव सुनाते हैं । वह बताते हैं कि एक बार वह होटल में ठहरे थे । अपने आसपास के कमरों में वेश्याओं की उपस्थिति का आभास पाकर उनका मन उद्विग्न हो उठता है और काम उनके शरीर को ग्रस्त करने लगता है । वह विवश होकर एक 'कालगर्ल' को अपने लिए बुलाते हैं किन्तु उसकी निर्लज्जता और निःसंकोचशीलता को देख उनका मन वितृष्णा से भर उठता है । जब वह उस वेश्या युवती से इस पेशे को अपनाने

1- इन्स्टालमेण्ट- पृ० 52

का कारण पूछते हैं - तो वह कहती है - 'क्या सभी आदमी वह काम करते हैं जिसे वे पसंद करते हैं ? हमारे सामने सवाल जिन्दा रहने का है, और जिन्दा रहने के लिए तो लोग न जाने क्या-क्या करते हैं। फिर धीरे-धीरे आदमी अपने काम का आदमी हो जाता है और पसन्द करने लगता है।'¹ वेश्या का यह उत्तर सुनकर पृथ्वीनाथ उसे सौ रुपये देकर एक महीने तक इस घृणित काम को न करने की प्रार्थना करते हैं। इस पर वह युवती कह उठती है -'बाबू जी, यह नहीं सोचा था कि दुनिया में अभी दया, हमदर्दी और इंसानियत बाकी है।' कितनी वेदना उसके इस कथन में छिपी है, समाज की शैतानियत और कठोरता के लिए कैसा आक्रोश है जिसे वर्मा जी ने एक वेश्या के शब्दों में मुखरित किया है।

<u>विक्टोरिया क्रॉस :-</u> यह कहानी एक मुख्य पात्र के एक छोटे से कृत्य द्वारा हास्य की सृष्टि करके पाठकों का मनोरंजन करने में पूर्ण सफल हुई है। जीवन में सफलता और प्रसिद्धि सदैव मनुष्य की योग्यता पर ही आधारित नहीं होती वरन् अवसर की अनुकूलता भी अत्यंत आवश्यक तत्व है। कभी-कभी तो किसी व्यक्ति का कोई उपहासात्मक कार्य भी उसे इस तरह सबके सामने लाकर उपस्थित कर देता है कि सब उसका सम्मान करने लगे इसका इस कहानी में बड़ा रोचक चित्रण किया गया है।

कहानी लेखक को एक रेस्ट्रां में दो ऐसे सैनिक बैठे दिखाई दे गये जिनमें से एक के वक्षस्थल पर विक्टोरिया क्रॉस चमक रहा था जो बड़े सैनिक सम्मान और गौरव की वस्तु समझा जाता था। जब लेखक की ओर से यह जिज्ञासा व्यक्त की गयी कि यह विक्टोरिया क्रॉस उस सैनिक को किस वीरता के कारण प्राप्त हुआ तो दूसरे सैनिक ने विक्टोरिया क्रॉस प्राप्त करने की कथा इस प्रकार सुनायी -' सुखराम अपने दाम्पत्य जीवन (पत्नी की मार) से परेशान होकर नदी में डूबने जा रहे थे किन्तु उन्हें सेना में भरती करनेवालों ने सेना में भरती कर लिया। सुखराम अपने शिक्षण काल में पर्याप्त प्रसन्न रहे किन्तु जब उन्हें फायरिंग लाइन पर जाना पड़ा तो उन्हें रोना आने लगा। भीरू प्रकृति के सुखराम तोपों की गड़गड़ाहट से बौखला उठे। भयानक गोलाबारी के बीच ही वह अपनी जान छुड़ाकर भागे। अपनी जिन्दगी को बचाने के लिए उनमें इतनी प्रबल इच्छा-शक्ति प्रवेश कर गई कि अनेक कठिनाइयों का सामना करने पर भी वह सही सलामत कर्नल साहब के खेमे तक पहुँच गये। हजारों गोलियों के निशान उनके कपड़ों पर थे किन्तु उनका शरीर अधिक क्षतिग्रस्त नहीं

1- इन्स्टालमेण्ट- पृ० 53

हुआ था । खेमे में पहुँचते ही उनके मुख से 'गोली' शब्द निकला और वह बेहोश हो गये ।

कर्नल ने समझा कि ट्रेन्चों का एम्युनिशन समाप्त होने की सूचना देने के लिए ही सुखराम अपनी जान की बाजी लगाकर खेमे में आये थे अतः उन्हें इलाज के लिए अस्पताल भेज दिया गया और उनकी वीरता की प्रशंसा करते हुए उन्हें विक्टोरिया क्रास प्रदान कर दिया। सेना में वीरता का अन्यतम पुरस्कार प्राप्त करके भी सुखराम की भीरु प्रकृति में कोई अंतर नहीं आया - उन्हें अपनी पत्नी से मार खानी ही पड़ती थी और उस समय सुखराम विक्टोरिया क्रॉस जेब में रख लेते थे ।

युद्ध से भागने की छोटी सी घटना का वर्मा जी ने बड़ी कल्पनात्मक और सुन्दर शैली में चित्रण किया है ।

<u>एक विचित्र चक्कर है :-</u> देवेन्द्र के पिता कभी बड़े जमींदार थे किन्तु कालान्तर में वैभव-स्मृति में ही अवशिष्ट रह गया और देवेन्द्र को निर्धनता ही पैतृक-सम्पत्ति के रूप में मिली । देवेन्द्र और कमला पड़ोसी थे और उनका बचपन से साथ-साथ उठना बैठना था, युवा होने पर कमला का विवाह हो गया । उस समय तो देवेन्द्र को कुछ निराशा नहीं थी क्योंकि दोनों में वासना का जन्म ही नहीं हुआ था किन्तु कुछ वर्ष पश्चात् जब कमला वैधव्य-भार से लदी अपने पितृ-गृह आयी तो देवेन्द्र की कविताएँ प्रायः सुना करती थी और देवेन्द्र की कविताओं में उसका प्रेम प्रतिफलित हो रहा था । एक दिन देवेन्द्र में वासना जागृत हो उठती है किन्तु कमला का कर्तव्य-बोध उसे रोक देता है और वह दोनों हमेशा-हमेशा के लिए अलग होने का संकल्प ले लेते हैं । देवेन्द्र तो कमला को क्रमशः भूलता गया किन्तु कमला प्रेम की आग में जल-जलकर खाक हो गयी, अंततः उसे मृत्यु का आलिंगन करना पड़ा किन्तु वह मरते समय भी अपने प्रेमी को भुला नहीं सकी और अपनी सारी सम्पत्ति देवेन्द्र के नाम कर गयी ।

देवेन्द्र कमला की सम्पत्ति पाकर निर्धन से धनी हो गया और धन की शक्ति ने उसकी मनुष्यता का अपहरण कर लिया । उसने अपनी प्रेमिका के प्रेम की उपेक्षा करके विवाह ही नहीं किया बल्कि भोगविलास और मद्यपान ही उसके जीवन का लक्ष्य हो गया ।

प्रस्तुत कहानी में नारी के संयम और त्याग की कहानी कही गयी है और पुरुष की एहसान फरामोशी तथा विलासी प्रवृत्ति को चित्रित किया गया है ।

मुगलों ने सल्तनत बख्श दी :- कहानी व्यंग्य शैली में लिखी गई है। अंग्रेजों द्वारा भारत में व्यापार करने आना तथा धीरे-धीरे विलासी तथा पतनोन्मुख मुगलों से सत्ता हथिया लेना- इस ऐतिहासिक सत्य को आधार बनाकर मुगल राज्य की न्यूनताओं की ओर कथाकार ने कटाक्ष किया है।

प्रस्तुत कहानी के कथावाचन के लिए वर्मा जी ने एक अजीबोगरीब व्यक्ति हीरोजी को चुना है जिनके पास ज्ञान का असीमित भण्डार है इसीलिए कहानीकार ने उनके पूर्व काल में 'विक्रमादित्य के नव-रत्नों में से एक' होने की बात पर बल दिया है। चाय की दूकान पर उस युग की चर्चा चल पड़ी जब दानव भी अपने वचन निभाते थे। इस पर हीरोजी मुगलों का दृष्टांत देकर बताते हैं कि कलियुग में भी ऐसे-ऐसे लोग भरे पड़े हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी अपने वचन निभाते रहे। हीरोजी ने मुगलों की कहानी प्रारम्भ की -

एक बार शाहंशाह शाहजहाँ की लड़की थोड़ा सा जल गई उसका घाव किसी प्रकार ठीक ही न होता था क्योंकि जो लेप लगाये जाते थे उनसे जलन होती थी और शहजादी दवा धो डालती थी। एक चतुर अंग्रेज को जब शहजादी के घाव का पता चला तो उसने शहजादी को केवल वेसलीन लगाकर ठीक कर दिया। इसके बदले पुरस्कार में उसने एक तंबू के नीचे आने लायक जमीन माँगी। बादशाह ने इसे स्वीकार कर लिया। कुशाग्र बुद्धि अंग्रेज ने रबर का तम्बू बनवाया जिसे जितना चाहो खींचा जा सकता था। उस रबर के तम्बू को क्रमशः खींचते-खींचते अंग्रेज दिल्ली तक ले आये किन्तु मुगलों की आन ऐसी कि उन्होंने उफ भी नहीं की और दिल्ली अंग्रेजों को सौंप दी, इस प्रकार मुगलों ने कलियुग में भी अपने वचन का अक्षरशः पालन किया।

रोचक ढंग से कहानी कहने के गुण की जितनी प्रशंसा की जाय वही न्यून ही होगी इस कहानी की रोचकता भी दर्शनीय है। प्रभुसत्ता के अपहरण के लिए रबर के तंबू का प्रतीक अत्यंत सफल और कल्पनायुक्त है।

इस कहानी में मुगलों के अनावश्यक और बढ़े-चढ़े शौक और झूठे कुलाभिमान व प्रतिष्ठा पर व्यंग्य किया गया है।

बाहर - भीतर :- असफल वैवाहिक जीवन नारी को कितना कटु तथा ईर्ष्यालु बना देता है तथा उनमें पुरुषों के प्रति कितनी घृणा और विद्रोह की भावना व्याप्त हो जाती है - इसे प्रस्तुत कहानी में अभिव्यक्ति प्रदान की गयी है। तथापि यह विद्रोह और घृणा केवल

बाह्य दिखाने के लिए है, उनका अंतस् काम पीड़ा से सदैव झुलसा करता है।

एक महिला विद्यालय की चार अध्यापिकाओं के समक्ष उनकी सहयोगिनी अपने विवाह निश्चित हो जाने पर अतिशय प्रसन्नता व्यक्त करती है तो चारों अध्यापिकायें अपने जीवन के कटु अनुभव सुनाते हुए उसे विवाह के लिए हतोत्साहित करने लगती हैं। चारों पुरुष की स्वामित्व की प्रकृति के विरुद्ध थीं, उनका विचार था कि एक स्त्री अपने सौन्दर्य के बल पर अनेक पुरुषों को अपना गुलाम बना सकती है तो क्यों वह इसके विपरीत पुरुष की गुलामी सहे। निर्मला, जिसका विवाह होनेवाला था, अपनी चारों साथिलों की व्यंग्यभरी बातों को सुनकर और उनकी हृदयहीनता व ईर्ष्या को देखकर अत्यंत व्यथित हो उठी। किन्तु वह चारों अध्यापिकायें निर्मला की भर्त्सना करके सुखी न हो सकीं। अपने जीवन में आये पुरुषों से विलग हो जाने के दुःख ने उनके हृदय में छिपी वेदना को अनावृत कर दिया।

इन पति-परित्यक्ता नारियों के 'बाहर-भीतर' में कितना अंतर था, इसे कहानीकार भगवतीबाबू ने बड़ी मार्मिकता से चित्रित किया है।

<u>प्रायश्चित :-</u> यह वर्मा जी की अत्यंत लोकप्रिय और बहुचर्चित हास्य-व्यंग्य कथा है। इस कहानी में एक ओर तो नवपरिणीता किशोरी बहू और नटखट कबरी बिल्ली के क्रिया-कलापों से उत्पन्न हास्य है तो दूसरी ओर समाज की रूढ़िग्रस्त मान्यताओं, अंधविश्वासों तथा ब्राह्मणों की शोषणवृत्ति पर तीव्र व्यंग्य प्रहार किया गया है।

कबरी बिल्ली नासमझ और अननुभवी रामू की बहू की भूलों का नाजायज फायदा उठाया करती थी इसीलिए रामू की बहू ने एक दिन योजनाबद्ध तरीके से उसे पाटा खींचकर मार दिया, बिल्ली चारों खाने चित हो गई। पाटे की आवाज सुनकर घर के सब लोग दौड़कर आये और बिल्ली को इस अवस्था में देख समझा कि वह मर गई। इस घटना से घर में हलचल मच गई। बिल्ली की हत्या के कुफल से सभी परिचित थे इसलिए बहू के सिर से हत्या का पाप उतरवाने के लिए पंडित को बुलाया गया। बहू को घोर कुम्भीपाक नरक से बचाने का उत्तरदायित्व पंडित ने अपने ऊपर ले लिया, केवल थोड़ी सी दान-दक्षिणा का प्रश्न था। पंडित और रामू की माँ के बीच मोल-भाव होते-होते जो दक्षिणा ठहरी वह इस प्रकार थी - ।। तोले सोने की बिल्ली, लगभग 23-24 मन अनाज और घी इत्यादि; इसके अतिरिक्त इक्कीस दिन के पाठ के इक्कीस रुपये तथा इक्कीस दिन तक पाँच-पाँच ब्राह्मणों को दोनों समय भोजन करवाना। रामू की माँ अपनी बहू के प्रेम के कारण विवश थीं। जब पंडित जी सोने की बिल्ली बनवाने जा ही रहे थे कि महरी ने

हाँफते हुए आकर सूचना दी कि बिल्ली तो उठकर भाग गई ।

बिल्ली के मरने की और फिर उसके उठकर भाग जाने की छोटी सी घटना द्वारा दो विपरीत परिस्थितियों का सुन्दर चित्रण प्रस्तुत कर वर्मा जी ने कहानी में अपरिमित सौन्दर्य भर दिया है । महरी के छोटे से वाक्य 'माँजी, बिल्ली तो उठकर भाग गई ।' द्वारा घर की संकटापन्न स्थिति कैसे उत्कट हास्य में परिणत हो गई है इसका लेखक ने चित्रण न करने पर भी पाठक को हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाने के लिए बाध्य कर दिया है।

प्रस्तुत कहानी में भोजन भट्ट ब्राह्मणों की लोभी वृत्ति का बड़ा ही हास्योत्पादक और व्यंग्यात्मक चित्रण किया गया है ।

<u>उत्तरदायित्व :-</u> नारी का सौन्दर्याभिमान उसे किस सीमा तक नीचे गिरा सकता है और इस अहं में वह दूसरों की जान से भी खेल सकती है - यही इस कहानी का प्रतिपाद्य है । 'मनुष्य के कर्मों के लिए कौन उत्तरदायी है - स्वयं मनुष्य, उसकी परिस्थितियाँ अथवा नियंता।' इस विषय पर अपनी दार्शनिक टिप्पणी देकर वर्मा जी ने जगदीश की आत्महत्या के दृष्टांत द्वारा अपना मत व्यक्त करने की चेष्टा की है । अपनी कुछ अन्य कहानियों की भाँति वर्मा जी ने आधुनिका नारी के मनोविज्ञान का विश्लेषण करते हुए स्वार्थी और धन के पीछे दौड़नेवाली नारियों को ही दोषी ठहराया है ।

मिस शीला एक धनी बैरिस्टर पिता की पुत्री थी । जगदीश का दुर्भाग्य कि उसका प्रेम शीला से हो गया । वह अपना सर्वस्व लुटाकर भी शीला को प्रसन्न रखना चाहता था किन्तु शीला तो विलासान्ध होकर जगदीश से खेल कर रही थी, वह उससे प्रेम नहीं करती थी । जगदीश ने कुछ क्षणिक आवेग के क्षणों को शीला के प्रेम की वास्तविकता के रूप में स्वीकार कर लिया । जब उसने शीला के समक्ष विवाह-प्रस्ताव रखा तो वह धनलोलुप नारी बिल्कुल मुकर गयी और प्रेम को एक पवित्र बंधन माननेवाले जगदीश ने प्रेम से निराश होकर आत्महत्या कर ली ।

शीला जैसी युवतियों के मनोगत भावों का विश्लेषण वर्मा जी ने शीला द्वारा आत्मविश्लेषण के रूप में बड़ी सुन्दर रीति से करवाया है । वह एकांगी भले ही हो किन्तु नारी-मनोविज्ञान के सत्य को अवश्य उद्घाटित करता है । शीला कहती है - अपने चारों ओर प्रणय-भिखारियों की भीड़ देखकर मुझे बुरा क्यों लगे ? मुझे अपनी सुन्दरता पर, अपनी मोहिनी शक्ति पर गर्व होता है । ----- मुझे केवल इसमें सुख मिलता है कि वे मेरी पूजा

करें, मेरे इशारों पर नाचें, कि मैं उन्हें अपना खिलौना बनाकर खेलूं।' नारी ही क्यों पुरुष भी यह चाहता है कि दस-बीस सुन्दरी युवतियाँ उसे घेरकर खड़ी रहें। मानव प्रकृति यही है, भले ही इसे समाज मानव-दुर्बलता कहे। शीला के इस कथन द्वारा वर्मा जी ने विपरीत सेक्स के प्रति आकर्षण के सत्य को प्रकाशित किया है किन्तु इस तथ्य की ओर भी भी वर्मा जी ने संकेत कर दिया है कि मानव की यह कामविकृति कभी-कभी इतना भयानक रूप धारण कर लेती है कि उसे अपने और समाज के भले-बुरे का भी ज्ञान नहीं रहता।

<u>परिचयहीन यात्री</u> :- इस कहानी में 'उत्तरदायित्व' की मिस शीला के विपरीत एक ऐसी नारी का चित्रण वर्मा जी ने किया है जो तन से सौन्दर्यवती न होकर मन से दैवी आभा से युक्त है। भगवती बाबू की अनेक कहानियों में नारी के बाह्य सौन्दर्य से उत्पन्न काम-विकृतियों का चित्रण मिलता है। प्रस्तुत कहानी में इसके विपरीत वर्मा जी ने मन के सौन्दर्य का प्रतिपादन किया है।

यह एक स्त्री की कहानी है जिसकी मुखाकृति अत्यंत कुरूप थी किन्तु हृदय अपने पति के लिए हर प्रकार से समर्पित था, उसका सुख-दु:ख उसके पति से बंधा हुआ था और वह अपने पति के सुख के लिए बड़ा-से -बड़ा त्याग करने के लिए तत्पर थी। इसीलिए उसके पति ने भी उसकी कुरूपता को निर्लक्ष्य करके अपनी आत्मा से उसे जोड़ लिया था। वे दोनों 'दो शरीर इक प्राण' हो गये थे। उस देवी-स्वरूपा स्त्री ने अपने पति को एक नवीन जीवन-दर्शन प्रदान किया था -'अभाव की पूर्ति का नाम ही प्रेम है।' इस दर्शन के अनुसार उस कुरुपाकृति वाली स्त्री ने अपनी पति के जीवन के सभी अभावों को पूरा कर दिया था; इतना ही नहीं पति के हर्ष और रुदन प्रतिबिम्बित होकर उनकी आत्मा को कर्तव्य-पथ पर अग्रसर करते थे। इस प्रकार उस स्त्री के पति के विचारों के माध्यम से वर्मा जी ने इस तथ्य की ओर पाठक का ध्यान आकर्षित किया है कि 'आत्मा की कुरूपता ही कुरूपता है यदि वह आत्मा को कलुषित होने से रोकती है तो वह कुरूपता-नहीं वरन् अनुपम सौन्दर्य की संज्ञा से अभिहित की जा सकती है। यह तो एक विशिष्ट 'व्यक्ति' की सहृदयता और समझ की खूबी थी कि उसने अपनी कुरुप पत्नी के मन में छिपे सौन्दर्य को खोज निकाला। इसके विपरीत कहानी में पुरुषों की सामान्य प्रवृत्ति -' पर स्त्री-सौन्दर्य की ओर जिज्ञासा और कौतूहल से देखना और आकृष्ट होना' पर व्यंग्य भी किया गया है। गाड़ी में बैठी आवरण से ढकी युवती पर

1- इन्स्टालमेण्ट- पृ0 103-104

पर प्रत्येक पुरुष व्यक्ति की नजर लगी थी - हर व्यक्ति घूँघट को चीरकर युवती के सौन्दर्य को देखना चाहता था । लेकिन जब उस युवती के पति ने घूँघट उलटकर स्त्री का चेहरा सबके समक्ष प्रस्तुत किया तो सबने उधर से नजर हटा ली । कुरूपता को कोई देखना नहीं चाहता था । कहानी की प्रत्येक घटना और मोड़ बड़ी मार्मिकता और भावुकता से चित्रित किया गया है ।

बॉय एक पेग और :- `उत्तरदायित्व` की ही भाँति `बॉय एक पेग और` भी नारी की धन लिप्सा और अर्थजनित काम विकृति को उद्घाटित करती है ।

विश्वकान्त धनी पिता का पुत्र था, अनिंद्य सुन्दरी माधवी से उसका प्रेम हो गया और विवाह भी निश्चित हो गया । विश्वकान्त हर प्रकार से सुखी था किन्तु उसके पिता ने माधवी की आँखों में जाने क्या देखा कि उन्होंने विश्वकान्त से कह दिया कि उसका विवाह माधवी से नहीं हो सकेगा । विश्वकान्त अपने रोबीले किन्तु असीम ममता से भरे पिता की अवहेलना करके माधवी से विवाह करने के अपने निश्चय पर अडिग रहता है । इसी बीच उसे पिता का एक तार मिलता है जिसमें व्यवसाय में घाटा होने तथा अस्वस्थ होने के कारण विवाह में उपस्थित न रह सकने की सूचना थी । विश्वकान्त पर तो प्रेम के पागलपन के कारण कोई असर नहीं होता किन्तु जब वह माधवी से इस तार के विषय में बताता है तो माधवी विश्वकान्त को जबर्दस्ती पिता के पास भेज देती है । विश्वकान्त माधवी की उदारता देखकर उसे देवी समझ बैठता है । वास्तविकता यह थी कि माधवी व्यापार में घाटे की बात सुनकर विश्वकान्त को टालने का यत्न कर रही थी । वह विश्वकान्त की अनुपस्थिति में उसके एक मित्र निर्मल से विवाह कर लेती है । गाँव पहुँचने पर विश्वकान्त को पता चलता है कि तार गलत लिखा गया था । वास्तविकता यह थी कि निर्मल के पिता को व्यवसाय में घाटा हो गया था, विश्वकान्त के पिता तो उसकी नीलाम हो रही जायदाद खरीद रहे थे । विश्वकान्त जब शहर लौटकर देखता है कि माधवी ने निर्मल से विवाह कर लिया है तो वह सत्य का उद्घाटन कर निर्मल और माधवी को चकित कर देता है । माधवी कंगाल से विवाह करके घुट-घुटकर मर जाती है और विश्वकान्त अपने अपरिमित प्रेम में निराशा प्राप्त होने से टूट जाता है ।

परिस्थिति और भाग्य से विवश होकर विश्वकान्त में दुनिया के प्रति ऐसा अनास्था का भाव भर जाता है कि उसके मन प्राण में एक कटु व्यंग्य से भरा पैशाचिक हास्य प्रवेश कर जाता है- दुनिया उसे दीवाना और बदमाश समझने लगती है और वह एक के बाद

एक शराब का पेग पीकर और मदिरा के आधिक्य से बेहोश होकर अपना दु:ख भूलने का अभ्यासी हो जाता है।

कहानी की अभिव्यक्ति में पर्याप्त स्वाभाविकता और वर्णन में अतिशय मार्मिकता है। `मैं अपने रुदन को ही अपना रक्त पिला-पिलाकर हँसाया करता हूं।`[1] जैसे कथन अपार अभिव्यंजना को लिए हुए हैं।

इन्स्टालमेण्ट :- कोई छोटी सी घटना को लेकर उत्कट हास्य की स्थिति उत्पन्न करने की अपूर्व क्षमता भगवती बाबू में है। `प्रायश्चित` में बिल्ली के भाग जाने से जैसे उन्मुक्त हास्य की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, उसी प्रकार `इन्स्टालमेण्ट` में भी एक छोटी सी घटना अत्यंत हास्योत्पादक दृश्य का निर्माण कर देती है।

चौधरी विश्वम्भरसहाय यों तो अवध के छोटे-मोटे ताल्लुकेदार के पुत्र थे किन्तु पिता से मत वैभिन्न्य हो जाने के कारण झगड़कर पिता से अलग प्रयाग में रहने लगे थे। एक दिन वह अपने एक मित्र के यहाँ गये थे वहाँ से लौटने पर उन्हें कोई सवारी नहीं मिल पायी। निराश होकर वह पैदल चलने ही वाले थे कि उन्हें एक इक्का दिखाई पड़ गया। उस इक्के, घोड़े और इक्के के मालिक की खस्ता हालत देखकर भी चौधरी साहब विवशता के कारण उस पर बैठ गये। थोड़ी दूर जाने के बाद ही उन्हें अपनी दो सहपाठिनें तांगे पर आती दिखाई दीं। चौधरी साहब ने उनकी दृष्टि से बचने की हर कोशिश की किन्तु वह सफल न हो सके और दोनों सहपाठिनें प्रभा और कमला इतने फटीचर इक्के पर अपने मित्र को बैठा देखकर खिलखिलाकर हँस पड़ीं। प्रभा और कमला के हँसने से चौधरी साहब के आत्म-सम्मान को इतनी ठेस पहुँची कि उन्होंने अपनी खराब आर्थिक स्थिति की ओर ध्यान न देकर `इन्स्टालमेण्ट बेसिस` पर एक कार खरीद डाली ताकि कमला और प्रभा को दिखा सकें कि उनके पास कार है, किन्तु दो महीने तक शहर का चक्कर लगाने पर भी उन्हें उन दोनों के दर्शन नहीं हो सके। कार खरीदना उन्हें इतना महँगा पड़ रहा था कि वह उसका इन्स्टालमेण्ट भी अपनी जेब से नहीं दे सकते थे।

प्रस्तुत कहानी में एक हास्योत्पादक घटना को माध्यम बनाकर बिगड़े रईसों की झूठी शान-शौकत और प्रदर्शन की भावना पर व्यंग्य किया गया है।

दो पहलू :- एक ही समाज में रहनेवाले विभिन्न व्यक्तियों का जीवन-लक्ष्य उनकी प्रकृति, संस्कार और स्वभाव के आधार पर भिन्न-भिन्न हुआ करता है। एक व्यक्ति के गुण समाज को आलोकित करने की क्षमता रख सकते हैं और दूसरे व्यक्ति की आत्मतुष्टि और स्वार्थपरता समाज के विद्रूपों की ओर संकेत करती है - यही समाज में स्थित व्यक्ति के

1- इन्स्टालमेण्ट- पृ० ११९

'दो पहलू' अथवा विभिन्न पहलू हैं जिसे भगवती बाबू ने अपनी प्रस्तुत कहानी में दो पृथक्-पृथक् दृष्टांतों से उजागर किया है।

रामेश्वर को अपने जीवन में हर प्रकार की सफलता प्राप्त हुई थी - अपने अध्ययन-काल में उसे प्रथम श्रेणी मिलती रही थी, रंगीन सपनों को सजाने के लिए कान्ता का पवित्र प्रेम मिला था और शारीरिक बल, विचारों की स्फूर्ति, हृदय की उमंग से उसका व्यक्तित्व अपने चरम निखार पर पहुँचा हुआ था। इसके अतिरिक्त जीवन में और अधिक सफलता का मार्ग उसके समक्ष प्रशस्त था किन्तु जीवन के इस अपार सुख-वैभव को छोड़ वह स्वतंत्रता-संग्राम में मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए वह अपने प्राण न्योछावर कर देने में तनिक भी संकोच नहीं करता।

दूसरी ओर इसी धरती पर नरक का भोग करने वाला भिखारी था। दाने-दाने का मोहताज, वृद्धता और कुरूपता, कुष्ठ से गलता शरीर लेकर भी जीवन जीने की ऐसी लालसा उसमें थी कि एक पूड़ी के टुकड़े के लिए वह कुत्तों से छीना-झपटी कर सकता था। ऐसा भिखारी, जिसे कोई देखना भी पसंद नहीं करता था, मेले में बिगड़े हाथी से बचने के लिए स्त्रियों और बच्चों को धक्का देता हुआ भाग खड़ा होता है। कहानी लेखक के वक्तव्य द्रष्टव्य है -'कल्पना के किस स्वर्ग को पाने के लिए वह नवयुवक अपने जीवन के स्वर्ग को ठुकराकर चला गया'[1] और 'कल्पना के किस नरक से बचने के लिए वह बुड्ढा और कोढ़ी भिखारी अपने जीवन के नरक से बुरी तरह चिपटा हुआ था?'[2] इन दोनों प्रश्नों का उत्तर भी इन्हीं प्रश्नों में निहित है अपने सुख को दूसरों के सुख के लिए ठुकरा देना और अपने दुख को भी अपने लिए ही संचित करके रखना- यह व्यक्ति के पृथक्-पृथक् पहलू हैं।

<u>मेज की तस्वीर</u> :- आत्म-विश्लेषणात्मक शैली में लिखी गयी प्रस्तुत कहानी एक ऐसे व्यक्ति के अन्तर्द्वन्द्व को चित्रित करती है जिसने एक स्त्री से प्रेम किया था किन्तु उससे विवाह न कर सका क्योंकि वह स्त्री मनोरमा अपने वचन पर टिकी न रह सकी, उसने धन के हाथों अपने प्रेम को बेच दिया।

रामनारायण ने भी यद्यपि विवाह कर लिया था तथापि वह मनोरमा को भूल

1- दो बांके- पृ० 11

2- वही- पृ० 12

नहीं सका था । वह एक बार पुन: मनोरमा से मिलकर अपने प्रणय को ताज़गी देना चाहता था किन्तु आर्थिक विवशता के कारण ऐसा नहीं कर पाता और इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि हम सभी अर्थ की परतंत्रता से बँधे हैं -"हाँ रुपया प्रेम पर भी विजय पा सकता है -- प्रेम पर ही क्यों, हमारी मनुष्यता पर, हमारी आत्मा पर। हम सब रुपये के लिए घृणित से घृणित काम करते हैं, खुशामद करते हैं, झूठ बोलते हैं, धोखा देते हैं -- कुछ नहीं हम सब रुपये के गुलाम हैं।"[1]

वर्मा जी की अर्थजनित समस्या को लेकर लिखी गयी अन्य अनेक कहानी की भाँति इस कहानी में भी नारी के धन-लिप्सु रूप को उभारा गया है। नारी के इस रूप के साथ-साथ भारतीय परम्पराओं से बँधी पति-समर्पिता नारी के रूप का संकेत भी दिया गया है।

<u>विवशता</u> :- भारतीय-समाज में नारी कितनी विवश है। वह अपने मनोवांछित व्यक्ति के साथ प्रेम के स्वप्न तो सजा सकती है, किन्तु उन स्वप्नों को साकार कर सकने का साहस उसके समाज ने उसे नहीं दिया है। जो पुरुष उसके अबलात्व को सम्बल देता है, वह उसी के प्रति नमित हो जाती है, भावनाशून्य होकर उसी पुरुष से अपनी आत्मा का सम्बंध जोड़ लेने के लिए विवश हो जाती है। नारी की इसी विवशता की समस्या को वर्मा जी ने अपनी कहानी में उठाया है।

लीला रमेश को प्रेम करती थी और रमेश लीला को, किन्तु उन दोनों में ही इतना साहस नहीं था कि समाज के समक्ष सिर उठाकर एक दूसरे को अपना सकते। लीला का विवाह एक अन्य पुरुष रामकिशोर से हो गया और रमेश ने भी एक दूसरी स्त्री से विवाह कर लिया। एक बार रमेश लीला से मिलने उसके घर जाता है तो उसे यह देख आश्चर्य होता है कि लीला में प्रेम का कोई स्पंदन शेष नहीं था, वह एकदम प्राणहीन हो गयी थी। इतना ही नहीं लीला अपने शराबी और पतित पति के लिए रमेश के रुपयों की चोरी भी कर लेती है।

एक हिन्दू नारी को सामाजिक प्रतिष्ठा के कारण जाने कितना त्याग करना पड़ता है, आत्म-समर्पण में ही उसकी सार्थकता है - हर दृष्टि से वह विवश है-यही इस कहानी का प्रतिपाद्य है।

1- दो बाँके- पृ० 16

<u>कायरता</u> :- अर्थ की अपार शक्ति के समक्ष व्यक्ति कितना दयनीय, अक्षम और विवश हो जाता है कि वह समाज के अन्याय का डटकर सामना भी नहीं कर पाता । अपने अधिकार के लिए संघर्ष न करके सामाजिक कायरता का शिकार हो जाता है । सम्पन्न व्यक्ति के हाथ में समाज ने इतनी शक्ति थमा दी है कि वह चाहे किसी की हत्या करे, किसी का भी शोषण करे, उस पर समाज ऊँगली नहीं उठाता ; किन्तु निर्धन व्यक्ति अर्थ सम्पन्न व्यक्तियों के कुचक्र में सदैव पिसता रहता है ।

रामेश्वर तीस वर्ष पहले अपने भाई के साथ चैन से जिंदगी बिता रहा था किन्तु भाई की मृत्यु के पश्चात् उसकी भावज ने उसे घर से निकाल दिया क्योंकि सारी सम्पत्ति भाई के नाम थी । रामेश्वर जानता था कि भावज की मृत्यु के पश्चात् वही सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होगा क्योंकि भाई के कोई संतान नहीं थी । इसीलिए वह कलकत्ते की एक गन्दी कोठरी में जीवन के नरक को इस आशा में भोगता रहा कि भावज की मृत्यु के पश्चात् उसके दुःख दूर हो जायेंगे किन्तु भावज मृत्यु के पहले ही अपने एक भतीजे को सम्पत्ति का वारिस बना गयी थी । रामेश्वर०और०उसके०पु सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए रामेश्वर और उसके पुत्र ने मुकदमा लड़ा, किन्तु भावज के भतीजे परमानन्द ने जज को पचास हजार की रिश्वत देकर उसे अपने पक्ष में फैसला देने के लिए विवश कर दिया । धन के बीहड़ पशु के सामने मनुष्य अपाहिज था । समाज और कानून सब धन के गुलाम हैं । यही नहीं, धन मनुष्य की मनुष्यता का अपहरण इस सीमा तक कर लेता है कि वह केवल धन के लिए स्वजनों का अहित सोचने में भी संकोच नहीं करता । रामेश्वर केवल धन के लिए ही तो अपनी भावज की मृत्यु की प्रतीक्षा करता रहा, वह जज को गोली मारकर बयान बदलवाने की कामना रखता था - यह बात दूसरी है कि समाज और धन की शक्ति ने उसे इतना अधिकार न देकर विवश और कायर बना दिया था ।

<u>काश मैं कह सकता</u> :- स्त्री का सबसे बड़ा धन है उसकी इज्जत, लेकिन जब वह अपनी इज्जत बेचने के लिए विवश हो जाये तो उसके अंतस् की करुणा और दयनीयता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है ।

निरुपमा के पति कांग्रेस के जलूस में सबसे आगे थे और उन्हें एक हिन्दुस्तानी कलक्टर की बर्बरता का शिकार होना पड़ा था । उन्होंने सरकार के टुकड़ों पर पलनेवाले मदान्ध अफसर को सत्य से अवगत कराया था -" सरकार के टुकड़ों के गुलामों को यह जान

लेना चाहिए कि वे टुकड़े उन्हें हम लोगों से ही मिल रहे हैं ।'[1] यह कथन ही उनकी मृत्यु का कारण बन गया था । पुलिस के सिपाही उन पर टूट पड़े थे और उन्हें अपनी जान से हाथ धोना पड़ा था ।

ऐसे देशभक्त नवयुवक की पत्नी निरुपमा को अपना परिवार पालने के लिए अपना शरीर भी बेचना पड़ गया था । वह इस कीचड़ से निकलने के ट्यूशन करना चाहती थी क्योंकि एक अध्यापिका के रूप में वह अपनी गृहस्थी चलाने में असमर्थ थी । रामनाथ जैसे उच्चाधिकारी उस पर अपनी कुत्सित दृष्टि डाल सकते थे, भले ही उसके यौवन से खेलने में पत्नी का भय था, किन्तु उनका विचार था कि ' अपने बच्चों को वेश्या से भी गई-बीती इस औरत से शिक्षा दिलवाने की मैं कल्पना भी नहीं कर सकता ।' रामनाथ स्वयं इतने गिरे हुए थे कि किसी भद्र महिला की सुन्दर फोटो को देखकर उसके चरित्र पर आक्षेप करके उन्हें आनन्द मिल सकता था किन्तु एक विवशता की दलदल में फँसी स्त्री को देखकर उससे घृणा करने का अधिकार उन्हें प्राप्त था । अपने समाज की ऐसी निर्ममता के कारण निरुपमा जैसी असंख्य स्त्रियों को पतन और चरित्र-भ्रष्टता का मार्ग अपनाना पड़ता है - इसी तथ्य की ओर वर्मा जी ने अपनी प्रस्तुत कहानी में भी संकेत किया है । समाज के तथाकथित उच्च वर्ग की कामविकृति पर व्यंग्य भी इस कहानी में मिलता है । वर्मा जी का विचार है -' किसने शरीर बेचा-- किसने आत्मा बेची - और क्यों ? मैं अपने चारों ओर देख रहा हूँ ; कोई भी तो ऐसा आदमी नहीं है, जो खरीदार हो -- सभी बेच रहे हैं ।' रामनाथ और निरुपमा के पति को मरवा डालने वाले कलक्टर जैसे अनगिनत व्यक्ति अपनी आत्मा ही बेच देते हैं, निरुपमा जैसी स्त्रियाँ अपना शरीर बेच देती हैं किन्तु परिस्थिति के भँवर में घूमने वाली निरुपमा जैसी स्त्रियों के प्रति कहानीकार की सहानुभूति देखकर यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्मा जी,जीवन में आत्मा बेचने वालों की ~~उप~~ अपेक्षा उन स्त्रियों को अधिक अच्छा मानते हैं जो शरीर तो बेचती हैं किन्तु जिनके अन्तस् में उस गन्दगी से निकलने के लिए पवित्र भावना विद्यमान रहती है ।

<u>रेल में</u> :- वर्मा जी की अधिकांश कहानियाँ किसी समस्या को उठाकर समाज पर ~~व्य~~ व्यंग्य करने की दृष्टि से लिखी गयी हैं । इस कहानी में एक ऐसे अधेड़ व्यक्ति की कहानी कही गयी

1- दो बाँके- पृ० 35

है जिनकी दृष्टि में स्त्री-पुरुष की सेवा-सुश्रूषा करनेवाली दासी से बढ़कर नहीं थी। इसी-लिए उन व्यापारी सज्जन ने अपनी मनुष्यता खोकर तीन विवाह कर डाले थे। इतना ही नहीं अपनी पुत्री की वयवाली युवती से विवाह करके उन्हें यह अधिकार प्राप्त हो गया था कि वह उसे किसी की ओर देखने भी न दें, उस पर कड़ी निगरानी रखें।

अतः अनमेल विवाहों की इस समस्या पर वर्मा जी ने पाठक का ध्यान आकृष्ट करने की चेष्टा की है कि अनमेल विवाह करनेवाले पुरुष में अपने वयोन्मुखी यौवन की हीन-भावना के कारण ऐसी संदेहास्पद स्थिति आ जाती है कि अपनी पत्नी का किसी परपुरुष से हँसना बात करना भी पसंद नहीं करते और दूसरी ओर पत्नी अपने पति के प्रति श्रद्धा और प्रेम न रखकर परपुरुष की ओर सहज ही आकृष्ट हो जाती है और पति की संदेहास्पद दृष्टि भी उन्हें रोक सकने में असमर्थ हो जाती है। इस प्रकार अनमेल-विवाह से उत्पन्न काम-विकृति पर कहानीकार ने प्रकाश डाला है।

<u>कुँवर साहब का कुत्ता</u> :- धन के अहं का धूम्र मनुष्य की आँखों के समक्ष इस प्रकार छा जाता है कि वह अपनी मनुष्यता को देख सकने की सामर्थ्य भी खो बैठता है इतना ही नहीं वह धूम्र दूसरों के लिए भी दु:खदायी हो जाता है, उसकी कड़वाहट विपन्न लोगों के मन-प्राण में भर जाती है। 'कुँवर साहब का कुत्ता' भी एक ऐसी ही कहानी है जिसमें जमींदार और ताल्लुकेदार वर्ग की अत्याचारिता तथा शोषण की वृत्ति का पर्दाफाश किया गया है।

कुँवर साहब को एक-से-एक बढ़िया विलायती कुत्ते पालने का शौक़ था। एक-एक हजार रुपये व्यय करके उन्होंने विदेशों से कुत्ते मँगवाकर अपने घर में रख छोड़े थे। उन कुत्तों के लिए उत्तम भोजन, नौकर और डाक्टर की ऐसी सुन्दर व्यवस्था प्रदान की गई थी जो सर्व-साधारण के लिए स्वप्न से बाहर की वस्तु है। पशुओं पर इतना अंधाधुंध खर्चा करने वाले मनुष्य को पशु से भी गया बीता मानते हैं। इसीलिए एक दिन जब एक धोबी का गधा कुँवर साहब के कुत्ते को मार डालता है तो कुँवर साहब अपनी मनुष्यता को ताक पर रखकर गधे के माथे पर गोली मार देते हैं और धोबी का परिवार रोता-बिलखता रह जाता है क्योंकि वह गधा तो उसकी रोजी कमाने का साधन भी था। कुँवर साहब तो तुरंत दूसरा कुत्ता मँगाने के लिए रुपया भेज सकते थे किन्तु धोबी के पास सिवा आँसू बहाने के दूसरा उपाय नहीं था। अर्थ के मद में चूर कुछ गिने-चुने लोगों के समक्ष सर्वहारा वर्ग कितना असहाय और दयनीय है - प्रस्तुत कहानी इसी मर्म को व्यक्त करती है।

<u>तिजारत का नया तरीका</u> :- प्रस्तुत कहानी में आजकल के उन नवयुवकों पर व्यंग्य किया गया है जो बिना परिश्रम के धन अर्जित करना चाहते हैं। कहानीकार ने खुशबख्तराय की दुर्दशा दिखलाकर इस तथ्य की ओर संकेत कर दिया है कि जब तक व्यक्ति में किसी कार्य को करने की लगन न हो, निष्ठा न हो, केवल बिना मेहनत के कोई धन उपार्जित करना चाहता हो, तो वह कभी अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो सकता वरन् उसका प्रत्येक कार्य उपहासास्पद ही बन जाता है।

जब खुशबख्तराय को यह सूचना मिली कि उनके पिता की शराब के नशे में उड़ने की कोशिश करने के कारण मृत्यु हो गयी है तो उन्हें दुःख होने के बजाय थोड़ी खुशी ही हुई क्योंकि उनका ख्याल था कि पिता की सम्पत्ति एक गलत आदमी के हाथ से निकलकर एक सही आदमी के हाथ में आ गयी है। वह अपने पिता का कर्ज चुकाकर बची हुई रकम से व्यापार करने का संकल्प करते हैं। वह विदेशी फर्म की एजेन्सी लेते हैं, यूनिवर्सिटी कैम्पस में रेस्ट्राँ खोलते हैं, जाली सिक्के चलाते हैं लेकिन अपने ऐश आराम और काहिली के कारण उन्हें हर जगह असफलता ही मिलती है। अन्त में वह व्यापार का एक बिल्कुल नया तरीका खोज निकालते हैं। एक सेठ से कहते हैं कि 'एक हफ्ते में पाँच हजार रुपया मुझे दे दो नहीं तो ब शहर के चौराहे पर तुम्हारे पाँच जूते मारूँगा।' सेठ द्वारा रुपया न देने पर वह सेठ को जूता मारते हैं और उन्हें जेल की हवा खानी पड़ती है। इस पर भी उनका उत्साह कम नहीं होता और वहक कहते हैं कि इस बार जब वह सेठ से रुपया माँगेंगे तो सेठ अपनी इज्जत बचाने के लिए रुपया अवश्य दे देगा।

हास्य और व्यंग्य से मिश्रित यह कहानी रेखाचित्र जैसी प्रतीत होती है। एक मूर्ख व्यक्ति के हास्यास्पद कारनामों का रुचे रोचक चित्रण प्रस्तुत कहानी में किया गया है।

<u>अनशन</u> :- इस कहानी में भोजन भट्ट मस्तराम पाण्डेय का रूप-चित्र बड़ी कुशलता से चित्रित किया गया है। छोटी-छोटी घटनाओं के द्वारा उनकी पेटू प्रवृत्ति को बड़े हास्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। दो लोटे भाँग पीकर यह कहना कि उनके मित्रों ने काफी भाँग पी और उनके लिए सिर्फ दो लोटे भाँग बची थी - उनकी इस विशेषता का उद्घाटन कर देती है।

परीक्षा के अन्तिम दिन अपना प्रश्नपत्र खराब हो जाने के कारण मस्तराम ने परीक्षक के इष्टदेव को प्रसन्न करने के लिए व्रत रखा। व्रत के दिन फलाहार में उन्होंने लगभग ढाई सेर मखाने की खीर और आध सेर मलाई खाई और उसको पचाने के लिए आधे

घण्टे तक रसोई में पैर फैलाए बैठे रहे । इसके पश्चात् इलाहाबाद की गर्मी उन्हें चैन से बैठने नहीं दे रही थी, अत: उन्होंने अल्फ्रेड पार्क के पास के एक गहरे नाले में जाकर शरण ली और चटाई बिछाकर सो रहे । फटपट मुंशी ने उधर से गुजरते हुए नाले में पड़े व्यक्ति को देखा तो उन्हें लगा कोई व्यक्ति मरा पड़ा है और उन्होंने थाने में इसकी सूचना दे दी ।

थानेदार ने उन्हें कोई क्रांतिकारी समझ कर गिरफ्तार कर लिया । सब सुबह जब पाण्डेय जी को नाश्ता नहीं मिला तो उन्हें क्रोध आ गया और साथियों के बहकावे में आकर उन्होंने अच्छे भोजन व व नाश्ते के लिए अनशन कर दिया । बब०बबब०बे दो दिन तक भोजन न करने के कारण उनकी हालत खराब हो रही थी अत: जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट ने उनके लिए फोर्स फीडिंग का आदेश दिया । जब नली से पाण्डेय जी को दूध पिलाया गया तो वह घटघट करके जल्दी ही दूध पी गये । इसके बाद सुबह शाम उन्हें नली से दूध पिलाया जाता और पाण्डेय जी यथाशीघ्र उसे पी जाते । फिर तो उन्हें जब भी भूख लगती वह चिल्लाने लगते -` मैं खाना नहीं खाऊँगा ।` और इतना सुनते ही उन्हें दूध पिला दिया जाता और दर्शकों की भीड़ उस दृश्य का आनन्द उठाती । अन्ततोगत्वा तहकीकात समाप्त होने पर मस्तराम को छोड़ दिया गया ।

उल्लेखनीय है कि वर्मा जी की कहानियों में घटना की सुन्दरता के साथ-साथ कहानी कहने की कला का सुन्दर समन्वय हो गया है ।`अनशन ` किस्सागोई की कला का सुन्दर उदाहरण है ।

<u>लाला तिकड़मीलाल :-</u> `अनशन ` में जहाँ ब्राह्मणों की पेटू वृत्ति पर छींटाकशी की गयी है वहीं लाला तिकड़मीलाल में एक वणिक की हर स्थिति में पैसा पैदा करने की प्रवृत्ति की ओर व्यंग्य किया गया है, किन्तु इन कहानियों में तीव्र कटाक्ष की अपेक्षा हास्योत्पादक चित्रण की छटा दर्शनीय है ।

ठाकुर नामकमावनसिंह को कवि सम्मेलन के सभापति बनकर और सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार को पुरस्कार देकर प्रसिद्धि प्राप्त करते देख लाला तिकड़मीलाल को भी लोकप्रिय बनने का शौक चर्राया । वह भी साहित्यकारों को पुरस्कार देकर जनता की प्रशंसा प्राप्त करने का निश्चय कर लेते हैं । कवि फटीश जी को तिकड़मीलाल की योजना सुनकर अत्यधिक आश्चर्य होता है क्योंकि वह तिकड़मीलाल के कंजूस स्वभाव को खूब अच्छी तरह जानते थे । तिकड़मीलाल भी नाम तो कमाना चाहते थे, किन्तु बेकार ही रुपया फेंकने की तो उनकी आदत नहीं थी इसलिए वह पुरस्कार के अभ्यर्थियों द्वारा भेजी गई पुस्तकों को किताबों के

एजेण्ट के हाथ बेचकर और पुरस्कार द्वारा प्रशंसा प्राप्त करने की लालसा रखने वाले कवि टेव जी को पुरस्कार देकर भी पाँच सौ रुपया न देने की युक्ति से रुपया कमाने का यत्न करते हैं किन्तु फटीश जी अन्त में कवि-सम्मेलन और पुरस्कार-समारोह में सारा भण्डाफोड़ कर देते हैं और तिकड़मीलाल को एक महीने की सजा हो जाती है।

इस कहानी की सबसे बड़ी विशेषता पात्रों के नामकरण द्वारा उनके चरित्र-चित्रण की है। नामों द्वारा चरित्र-चित्रण के अतिरिक्त नामों द्वारा हास्य की सृष्टि भी हुई है। प्रस्तुत कहानी में हिन्दी जगत में विभिन्न पुरस्कारों के पीछे चलनेवाली धाँधली पर भी व्यंग्य किया गया है। साहित्य में प्रसिद्धि प्राप्त किये हुए साहित्यकारों को किस प्रकार उनकी मामूली रचनाओं पर भी पुरस्कार मिल जाता है इस ओर कहानीकार ने इंगित किया है।

<u>नाजिर मुंशी</u> :- जीवन में बुद्धि को देवता माननेवाले वर्मा जी ने ज्ञान को कुरूपता और अज्ञान को सौन्दर्य कहा है। बचपन के अज्ञान का सौन्दर्य था जो नाजिर मुंशी के गुणों की प्रशंसा करते अघाता नहीं था। उसके बाद ऊँच-नीच, गरीब -अमीर के भेदभाव के ज्ञान ने नाजिर मुंशी के स्वप्न को बुरी तरह छिन्न-भिन्न कर दिया।

नाजिर मुंशी गरीब होते हुए भी बड़े मिलनसार, हँसमुख और हाजिर जवाब व्यक्ति थे और इसीलिए प्रत्येक समाज में उनको यथोचित सम्मान भी प्राप्त होता था। एक बार एक जगह शादी में वर और कन्या पक्ष में मनमुटाव हो जाने पर उन्होंने अपनी युक्ति के बल पर दोनों पक्षों में समझौता करवा दिया था। इस घटना के कारण बूढ़े-बच्चे सभी ने उनकी पर्याप्त प्रशंसा क भी की थी किन्तु समय बदला, सामाजिक मूल्यों में अंतर आता चला गया। पच्चीस वर्ष बाद उसी परिवार में शादी के सिलसिले में कहानीकार का जाना हुआ तो नाजिर मुंशी की अवहेलना और तिरस्कार देखकर कहानीकार को अत्यंत क्लेश हुआ। उसने देखा खाली समय में ऊबते हुए लोगों को नाजिरमुंशी की याद आती थी, नाजिर मुंशी मजाक करने के लिए मजाक करते भी थे किन्तु उनमें भावना और उल्लास का अभाव स्पष्ट देखा जा सकता था। नाजिर मुंशी से मनोरंजन का काम निकालने के पश्चात् कोई उन्हें देखता भी नहीं था। इतना ही नहीं नाजिर मुंशी जैसे जिन्दादिल आदमी से नौकर की तरह काम लिया जाता था और उसी तरह व्यवहार भी किया जाता था। सबसे अधिक आश्चर्य तो कहानीकार को तब होता है जब वह देखता है कि नाजिर मुंशी ने भी इस स्थिति को सहज-रूप में स्वीकार कर लिया है। दूसरों की बात को हँसी में उड़ा देने वाले व्यक्ति में दूसरों के अपमान का उत्तर देने की सामर्थ्य समाप्त हो गयी है और वह धन के पिशाच के

समक्ष अपनी आत्मा को नमित कर चुका है । नाजिर मुंशी के इस ह्रास को देखने के पश्चात् लेखक का कथन कितना सटीक प्रतीत होता है -' मेरे सामने धन का पिशाच अपनी सारी पाशविकता, कुरूपता तथा शक्ति के साथ खड़ा हो गया । ----- जिसे हम मनुष्यता कहते हैं, वह धन के पिशाच के पैरों पर झुकी हुई उसकी पूजा कर रही है ।' और 'हम सब नाजिर मुंशी हैं, हम सब धन के गुलाम हैं । हम सबों की आत्मा को धन के पिशाच ने अपने पैरों के नीचे कुचल रखा है । नाजिर मुंशी में तो संसृति का एक बहुत ही साधारण नियम प्रदर्शित था ।'[1]

'नाजिर मुंशी' कहानी रेखाचित्र जैसी प्रतीत होती है और उसमें स्वानुभूति की मार्मिकता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है ।

<u>पराजय अथवा मृत्यु</u> :- प्रकृति के स्वाभाविक नियम की अवहेलना करने से कुंठा का आविर्भाव होता है और उसका अतिक्रमण करने से व्यक्ति का सारा आदर्श आदर्श चूर- चूर हो सकता है - इसी तथ्य का दिग्दर्शन यह कहानी प्रस्तुत करती है ।

भुवनेश्वरी देवी में अपनी किशोरावस्था से ही इस भ्रामक धारणा का प्रादुर्भाव हो गया था कि त्याग,बलिदान और भावना की सद्भावना के कारण स्त्री निर्बल बनी है और वह पुरुष की गुलाम बनी हुई है । अपने समय में स्त्री-जागृति की लहर से प्रभावित होकर उन्होंने नारी को गुलामी से ऊपर उठाने का संकल्प ले लिया था और 'पुरुष' को अपने जीवन से अलग कर दिया था । एक प्रकार से वह पुरुषों से घृणा करती थीं। पुरुषों के विरोध में इनके लेख प्राय: पत्रिकाओं में छपते थे । किन्तु अचानक एक पुरुष रमेश उनके जीवन में आया और विभिन्न परिस्थितियों में अपना गहन प्रभाव उन पर जमाता चला गया। रमेश की वह अवहेलना नहीं कर सकीं और रमेश के द्वारा विवाह के प्रस्ताव पर अपनी स्वीकृति भी दे दी । अब उनके समक्ष प्रश्न था कि जिस गुलामी का विरोध करने के लिए उनकी इतनी प्रतिष्ठा थी, उसे ही वह स्वयं स्वीकार करने जा रही थीं । इस पतन और पराजय से वह मृत्यु को ही श्रेष्ठ मानती है और आत्महत्या के लिए जहर खा लेती हैं किन्तु मृत्यु से पूर्व उनका प्रलाप उनकी पराजय का स्पष्ट अंकन कर देता है ।

'जीवन में स्वस्थ भोग के प्रति आस्था' - वर्मा जी के साहित्य में सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है । प्रस्तुत कहानी में भी सृष्टि के इसी नियम का प्रतिपादन किया गया है । प्राकृतिक नियम की अवहेलना करके भुवनेश्वरी देवी को पराजय और मृत्यु दोनों का आलिंगन करना पड़ा ।

1- दो बांके- पृ० 94

दो बाँके :- हास्य और व्यंग्य से सुसज्जित प्रस्तुत कहानी वर्मा जी की अत्यंत लोकप्रिय और बहुचर्चित कहानियों में से एक है। उत्तर प्रदेश के लखनऊ शहर की स्थानीय विशेषताओं का चित्रण करते हुए कहानीकार ने वहाँ के शोहदों(गुण्डों) की प्रदर्शनप्रियता और शौकीनी पर व्यंग्य किया है।

दो बाँके- शोहदों के दलों का आपसी झगड़ा, द्वन्द्व-युद्ध की घोषणा,उसकी तैयारी,द्वन्द्व-युद्ध का प्रारम्भ किन्तु अंत में दोनों की सुलह का बड़ा सजीव चित्रण इस कहानी में किया गया है। अवध के नवाबों के ह्रास के पश्चात् तद्‌युगीन संस्कृति के अवशिष्ट चिन्हों के रूप में -लखनऊ में वेश्याओं के मुहल्लों में रहने वाले शोहदे अर्थात् बाँके आज भी दिख जाते हैं। इन्हीं बाँकों की जिन्दादिली और झूठी शान और आडम्बर का सप्राण वर्णन इस कहानी में हुआ है। दो बाँको की लड़ाई की नाटकीयता को एक देहाती की उक्ति 'मुला स्वाँग खूब भरायो' स्पष्टतया अनावृत्त कर देती है। इस कहानी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि लखनऊ के सफेदा आम, खरबूजे, रेवड़ियाँ, वहाँ की जिन्दादिली और नफासत की चर्चा और वहाँ के इक्केवालों और बाँकों का सजीव चित्रण लखनऊ के रहनेवालों अथवा वहाँ से परिचित लोगों की आँखों के समक्ष लखनऊ की एक झाँकी प्रस्तुत कर देता है और जो लखनऊ से परिचित नहीं है उनके मन में एक जिज्ञासा और उत्सुकता का निर्माण कर देने की अपूर्व क्षमता इस कहानी में है।

अत्यंत सूक्ष्म कथा के रहते हुए भी नाटकीयतायुक्त वर्णन की कुशलता और रोचकता ऐसा तत्व है जिसने प्रस्तुत कहानी के लालित्य को द्विगुणित कर दिया है।

छह आने का टिकट :- इस कहानी में एक ऐसे व्यक्ति का चित्र व्यंग्य शैली में प्रस्तुत किया गया है जिसको अर्थाभाव ने मुफ्तखोर बना दिया था। मनुष्य के आर्थिक अभाव,उसके क्रिया-कलाप को इस सीमा तक मूर्खतापूर्ण बना देते हैं कि उसमें विवेक और शिष्टाचार का नितांत अभाव दृष्टिगत होने लगता है और उसका मूर्खतापूर्ण व्यवहार दूसरों के लिए कितना असुविधा-जनक हो जाता है इसका चित्रण इस कहानी में हुआ है।

रामखेलावन शरण नारायणप्रसाद सिंह अपनी कविताएँ समय-समय पर पत्रिका सम्पादक किशोर जी के पास भेजते रहे थे किन्तु अनेक कारणों से किशोर जी उन कविताओं को अपनी पत्रिका में स्थान नहीं दे सके थे अत: रामखेलावन जी अपनी पर्याप्त रचनाएँ लेकर स्वयं किशोर जी के कार्यालय में उपस्थित हो गये और किशोर जी के लाख टालने पर भी जबर्दस्ती उनके मेहमान बन गये। रामखेलावन अनाहूत मेहमान होकर भी बिना संकोच किशोर जी के यहाँ भोजन करते, नाश्ता करते और किशोर जी के ‍[illegible] ट्राम के टिकट पर

कलकत्ता की सैर करते । एक दिन तो उन्होंने सीमोल्लंघन ही कर दिया जब वह किशोर जी द्वारा खरिदवाये `छह आने के टिकट` पर सुबह से रात तक कलकत्ता की सैर करते रहे । रामखेलावन का लालच इस सीमा तक बढ़ा कि वह रात के ग्यारह बजे टिकट का पूरा उपयोग करने के विचार से एक ऐसी बस पर बैठे जो पुन: किशोर जी के निवास की ओर लौटती नहीं थी । ऐसी हालत में रामखेलावन को नौ मील तक पैदल ही घर की ओर आना पड़ा, किन्तु वह घर नहीं पहुँच सके क्योंकि उनकी बेहोशी जैसी हालत देख पुलिसवाले उन्हें शराबी समझकर थाने ले गये । जब थाने के सिपाहियों को पता चला कि रामखेलावन किशोर जी के मेहमान हैं तो उन्होंने किशोर जी को फोन किया ताकि वह अपने शराबी मेहमान को ले जायें । किशोर जी अब तक रामखेलावन की हरकतों से बुरी तरह तंग आ चुके थे इसलिए उन्हें रामखेलावन से साफ-साफ कहना पड़ा कि वह अपने घर लौट जायें लेकिन रामखेलावन घर नहीं लौट सकते थे क्योंकि वह अपने टिकट कलेक्टर बश बहनोई के साथ बिना टिकट कलकत्ता आये थे और उन्हीं के साथ उन्हें वापस भी जाना था ।

इस प्रकार प्रस्तुत कहानी द्वारा ऐसे लोगों का यथार्थ चित्रांकन हुआ है जो दूसरों के सहारे मौज करना चाहते हैं । अर्थाभाव ऐसे व्यक्तियों की लज्जा और विवेक को पूर्णरूपेण हर लेता है ।

<u>रहस्य और रहस्योद्घाटन</u> :- यह वर्मा जी की सबसे बड़ी कहानी है, जिसमें एक कहानी के अन्दर दो कहानियाँ हैं । इसमें उच्च मध्यवर्ग के तथाकथित बुद्धिजीवियों की ऐशोआराम और अंध-विश्वासों से भी जिन्दगी पर व्यंग्य किया गया है ।

अपनी अतिशय व्यस्तता में से निकला शनिवार की शाम शाम का थोड़ा सा फुरसत का समय बिताने के लिए चार व्यक्ति `शनिवार क्लब` में इकट्ठे होते हैं । ये चार व्यक्ति क्रमश: ज्ञान गुप्त गौतम (गाँजे की स्मगलिंग से लाखों की सम्पत्ति एकत्रित करके अब भावी मंत्री के रूप में देश की सेवा के लिए कृत-संकल्प), बैरिस्टर टंडन , अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त पत्र के संवाददाता लोकनाथ मिश्र(इन्हें पीर औलियों में अपार श्रद्धा थी) और डॉक्टर महेश्वरनाथ हैं । शराब पीने और रमी खेलने के साथ-साथ परस्पर वार्तालाप का प्रवाह कुछ आध्यात्मिक और पारमौतिक बातों की ओर मुड़ जाता है । मिस्टर मोलानाथ टंडन और लोकनाथ मिश्र अपने-अपने जीवन की क्रमश: सोने की माला खोने और मिलने की तथा सट्टे के खुलनेवाले भाव बतानेवाले युवक की कहानी सुनाते हैं । ये सब रहस्य थे और सामान्य जन क की पहुँच के बाहर थे जैसा कि उस सट्टे का भाव बतानेवाले युवक ने स्वयं बताया था -`यह

सब पिशाचविद्या और पिशाचवृत्ति है, 'मैं तो अनजाने ही इसमें फँस गया हूँ, आप धर्मात्मा आदमी हैं, आप इससे दूर ही रहिए।'[1] किन्तु इन सब पारभौतिक विद्याओं में ऐसा आकर्षण है कि बड़े-बड़े शिक्षित और बुद्धिवादी व्यक्ति भी इसके आकर्षण में खिंचते चले जाते हैं। ये शिक्षित व्यक्ति विज्ञान के द्वारा इसका हल ढूढ़ निकालने की चेष्टा भी करते हैं, जैसा कि डॉक्टर महेश्वरनाथ ने बताया -' आप लोग जानते ही हैं कि वैज्ञानिकों ने अणु का विस्फोट कर दिया है। पदार्थ अणुओं से बना है, और अणु के विस्फोट पर इनर्जी या ऊर्जा रह जाती है। यह ऊर्जा अदृश्य है। इतनी तो विज्ञान को उपलब्धि हो चुकी है। अब ऊर्जा से अणु बने और अणु से पदार्थ बने, विज्ञान यह नहीं कर सका है। तो बाबा देवमलंग ने यह किया होगा कि सोने की माला को अणु-समूह में बदल दिया होगा, और फिर उस अणु-समूह को ऊर्जा बना दिया होगा। वह ऊर्जा इलाहाबाद से लखनऊ- और यहाँ आते ही ऊर्जा के अणु बने, और अणु से फिर पदार्थ बन गया। यानी सोने की माला, वैसी-की-वैसी बन गयी।'[2] किन्तु पारभौतिक विद्या का ऐसा वैज्ञानिक विश्लेषण करने के पश्चात् भी डॉक्टर महेश्वरनाथ यह स्वीकार करते हैं कि यह सब 'इतनी आसानी से नहीं हो सकेगा।' इसीलिए वह अपने जीवन में घटित ऐसी ही रहस्यमय घटना सुनाते हैं।

प्रस्तुत कहानी का निहित व्यंग्य यही है कि आज के इस वैज्ञानिक युग में भी हमारे देश की शिक्षित जनता भी इस तरह की संयोगात्मक और जादू-तमाशे भरी घटनाओं से चमत्कृत हो जाती है और अपने अवकाश का समय इस प्रकार की लनतरानियों के सुनने-सुनाने में व्यतीत करती है जिसे कहानी के अंत में दो बेयरा की बातचीत के माध्यम से स्पष्ट भी किया गया है -' तभी कहीं से आती हुई बेयरा रामदीन की आवाज सुनायी पड़ी-' ई पढ़ि-लिखि मनई गदहा होत हैं, ई हमें नाहीं मालुम रहा।'

और उसके बाद मुंशी चौकीदार की आवाज सुनायी पड़ी-' अरे ई गदहा न आयं- हराम केर पैसा, हराम केर शौक, हराम केर लनतरानी। गदहा तो आप हम कुटकवा मनई।'

किन्तु यहाँ उल्लेखनीय है कि इस कहानी में वर्मा जी का दृष्टिकोण स्पष्टरूप से

1- मेरी कहानियाँ - पृ० 82

2- वही- पृ० 76

3- वही- पृ० 83

व्यक्त नहीं हो पाया है। पारमौतिक विद्या से सम्बंधित रहस्यमरी घटनाओं को सुनाते समय लेखक की तन्मयता के अनुपात में बेयरा द्वारा किया गया रहस्योद्घाटन और अणु-बम की फैक्टरी खोलने का सुझाव देने का व्यंग्य अपना पूर्ण प्रभाव डालने में असमर्थ रहा है।

पटा -बनैठी :- प्रथम पुरुष शैली में लिखी इस कहानी में भारतीय नारी के दो विभिन्न रूपों पर व्यंग्यात्मक शैली में विचार किया गया है - एक ओर है अशिक्षित नारी जो पुरुष के अत्याचार और अन्याय को जान-बूझकर स्वीकार करती जाती है तो दूसरी ओर है शिक्षित नारी जिसे शिक्षा ने किसी सीमा तक उद्दंड बना दिया है।

कथा-वक्ता अपनी श्रीमती जी की पूजा करके पिक्चर देखने की योजना बना रहे थे और श्रीमती जी नारी की दुर्दशा पर आँसू बहा रही थीं, उसी समय कथा वक्ता रमेश के मित्र त्रिवेणीलाल, जो नेता और समाज-सुधारक थे और जिन्होंने महिला विद्यालय में बालिकाओं के लिए व्यायामशाला खोली थी, अपनी व्यायामशाला की संस्था के लिए चंदा लेने आये। रमेश की श्रीमती जी चंदे के लिए रुपये दे तो नहीं रही थीं किन्तु नारी-उद्धार की बात सुनकर उन्होंने चंदा दे दिया। व्यायामशाला के उत्सव के दिन रमेश, उनकीपत्नी और रमेश के एक मित्र का पुत्र, सब उत्सव देखने पहुँचे। रमेश के मित्र का पुत्र महिला विद्यालय में अपनी होनेवाली पत्नी को देखने के लोभ से गया था। उत्सव के बीच जब रमेश के मित्र के पुत्र ने जिसे वह अपना भतीजा मानते थे, अपनी भावी पत्नी की खोज करनी चाही तो उसे पता चला कि व्यायाम-प्रदर्शन में पटा-बनैठी अर्थात् लाठी चलाने का प्रदर्शन करने वाली लड़की ही उनकी भावी पत्नी थी। भतीजे की भावी पत्नी महामाया ने उस युवक द्वारा बातचीत करने पर जिस रुक्षता और उद्दंडता से उसे उत्तर दिया इसका कुछ अंश यहाँ द्रष्टव्य है -"तो अब आपने कर लिए मेरे दर्शन। मेरे भाई की आवारा लोगों की दोस्ती है- इसका मुझे दु:ख है ; अबकी जब मुझे मिलेंगे तब मैं उन्हें आड़े हाथों लूँगी।" यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि बात-प्रारम्भ करते ही महामाया ने अपने हाथों में लाठी कसकर पकड़ ली थी।

अपनी भावी पत्नी के इस रूप को देखकर रमेश के शक्तिशाली पुरुषत्व से युक्त भतीजे को अपने संघर्षमय दाम्पत्य जीवन की कल्पना से इतना भय लगा कि उसने अपने भावी श्वसुर को पत्र लिखा जिसमें यह स्पष्ट कर दिया कि वह उनकी पुत्री के लिए सर्वथा अयोग्य सिद्ध होगा और यह भी सुझाव दिया कि -" आप अपनी सुपुत्री का विवाह किसी ऐसे योग्य वर के साथ करें जो मरियल हो, दब्बू हो और आपकी ~~फिर~~ सुपुत्री का फरमाबदार नौकर बन सके। ~~व~~ उस हालत में अपने पति की तथा अपनी रक्षा करने के लिए आपकी सुपुत्री

अपने बटा-बनेठी के हाथों का सार्थक उपयोग कर सकेगी ।''[1]

रमेश के भतीजे द्वारा महामाया को अस्वीकार करने के पीछे एक दूसरे व्यंग्य की संभावना भी दिखती है कि पुरुष पत्नी के रूप में सबला नारी को स्वीकार नहीं कर पाते- उनको तो ऐसी पत्नी चाहिए जो उनकी उचित अनुचित बातों को शिरोधार्य करती जाये, उन्हें एक मन से कोमल नारी पर हाथ उठाते लज्जा का अनुभव नहीं होता । अपने पुरुषत्व की साख बनाये रखने के लिए वह ऐसी पत्नी की कल्पना भी नहीं कर सकते जो स्वयं आत्मरक्षा कर सकती हो ।

रमेश की पत्नी और महामाया- दो नारी- पात्रों को रखकर कहानीकार ने अशिक्षित और शिक्षित स्त्रियों के असंतुलित रूप का अंकन किया है । हमारे समाज में एक ओर रमेश की पत्नी जैसी स्त्रियाँ हैं, जो पुरुष के अत्याचार को आँसू बहाते हुए चुपचाप सहा करती हैं । दूसरी ओर महामाया जैसी स्त्रियाँ हैं, जो शिक्षित होकर अपनी कोमलता और शिष्टाचार भी गँवा बैठती हैं । कहानीकार ने यह संकेत भी कर दिया है कि महामाया जैसी स्त्रियाँ अपनी शिक्षा का दुरुपयोग करके अपना जीवन भी दुखमय बना सकती हैं ।

<u>पियारी :-</u> धन-लिप्सु नारी काम-विकृतियों को गले लगाकर अपना जीवन नरक-तुल्य बना लेती है - यही इस कहानी का प्रतिपाद्य है । वर्मा जी की कई कहानियों में नारी को विवशता की स्थिति में शरीर बेचकर धनोपार्जन करते दिखलाया गया है । पियारी इन स्त्रियों से कुछ अलग दिखती है । उसका पति बैंक में चपरासी था । पियारी को युवती और सुन्दरी होने के कारण गहने-कपड़े, मेले-तमाशे का खूब शौक था, जिसे उसका पति पूरा नहीं कर पाता था । अपने समाज में जाने कितनी ऐसी युवतियाँ नित्यप्रति दिखती हैं जो भीषण निर्धनता में दम तोड़ देती हैं, किन्तु किसी के समक्ष आँचल नहीं फैलाती हैं, चारित्रिक पतन तो बहुत दूर की बात है । इसके विपरीत पियारी अपने पति नारायण के दफ्तर जाने के बाद आवारा किस्म के लोगों के साथ ही अपना समय व्यतीत करती थी । सीधे-सादे नारायण ने अपनी पत्नी की कामना को पूर्ण करने के लिए बैंक से गबन किया । फलस्वरूप नारायण को जेल जाना पड़ा और पियारी पति के लिए रो-धोकर भी अपने दुश्चरित्र को छोड़ नहीं पायी और पचास साल बाद जब उसको कुष्ठ जैसे भयंकर रोग ने दबोच लिया तो उसे अपने कुकर्म का आभास हुआ और वह नारायण की प्रतीक्षा करते-करते एक दिन काल-कवलित हो गयी ।

1- मेरी कहानियाँ - पृ० 90

दो रातें :- जीविकोपार्जन के लिए वेश्या का जीवन बिताने वाली नारी भी सच्चे प्रेम की कामना करती है, धन देकर उसके शरीर को खरीदनेवाले तो उसके पास नित्य ही आते हैं किन्तु निश्छल प्रेम के कुछ क्षण उसके जीवन की अमूल्य निधि बन जाते हैं - 'दो रातें' की युवती के द्वारा इसी तथ्य की पुष्टि कहानीकार भगवतीबाबू ने की है। 'तीन वर्ष', 'वह फिर नहीं आई' उपन्यासों की तरह वर्मा जी की अनेक कहानियों में भी विवशतावश शरीर बेचनेवाली नारी की आत्मिक पवित्रता और अपने प्रेमी अथवा पति के प्रति अनन्यता को अभिव्यक्ति प्रदान की गई है।

शिक्षित, सुसंकृत और धनाढ्य कलाकार जीवन को कलकत्ता जाते समय रेल के एकांत डिब्बे में एक युवती से भेंट हो जाती है। जीवन और वह युवती परस्पर घनिष्ठ होते-होते एक दूसरे के प्रेम में खो जाते हैं। मिलन की उस रात युवती अपने जीवन की वास्तविकता इन शब्दों में प्रकट करती है - 'जिस समय हम जिन्दगी की कुरूपता से ऊपर उठ जाते हैं, जिस समय दुनिया की विवशता, और उस विवशता से मिली हुई चेतना की कसक हमें क्षण भर के लिए मुक्त कर देती है - वही अवस्था सपने की होती है।'[1] वह युवती अपने जीवन की वास्तविकता को भूलकर इसी सपने के सहारे अपना जीवन व्यतीत करना चाहती थी इसीलिए वह जीवन से अपना नाम पता नहीं बताती और अपना पीछा न करने का आग्रह करती है। दूसरी रात जब जीवन कलकत्ते की हलचल में भी भयानक सूनेपन का अनुभव करता है तो उसके मित्र उसे एक वेश्या के घर ले जाते हैं। वहाँ जीवन उसी युवती को वेश्या के रूप में देखकर आश्चर्यचकित हो जाता है और वह युवती तो इस प्रकार स्तंभित-सी खड़ी रह जाती है मानो उसकी चिर-सम्पदा लूट ली गयी हो। जिस जीवन को उसने अपना आराध्य मान लिया था और जिससे उसने सच्चा प्रेम किया था, उसी आदर्श देवता को वेश्यालय की सीढ़ी पर देख उस युवती का स्वप्न छिन्न-भिन्न हो गया था।

वह युवती वेश्या तो थी किन्तु उसे भी सच्चे प्रेम की तलाश थी और संयोगवश उसके जीवन में ऐसा क्षण आया भी किन्तु जब वही प्रेमी उस प्रेम की गंभीरता को भुला देता है तो युवती का मन टूट जाता है और वह कलवत् जीवन के पैसे का सत्कार करने को तत्पर हो जाती है। 'परिस्थितियों की दासता' को प्रस्तुत कहानी में भी स्वीकार किया गया है। वेश्या युवती जीवन से मिलन वाली रात की स्मृति के सहारे अपने घृणित जीवन

1- मेरी कहानियां - पृ० 130

को भूल नया जीवन प्रारम्भ करना चाहती है, किन्तु जीवन के वेश्यालय आने की परिस्थिति उसे अपने पुराने पेशे को पुन: अपनाने के लिए विवश कर देती है ।

बतंगड़ :- बात का बतंगड़ बनाना अथवा बात को नमक मिर्च लगाकर कहना यह मानव मात्र की अत्यंत स्वाभाविक प्रवृत्ति है । बहुत कम लोग ही इसके अपवाद रूप में मिलेंगे । मनुष्य के इसी मनोविज्ञान पर वर्मा जी ने प्रस्तुत कहानी पर व्यंग्य किया है । प्राय: ऐसा प्रचलित है कि स्त्रियों और तुच्छ प्रवृत्ति के लोगों में यह बात अधिक पायी जाती है, किन्तु वर्मा जी ने प्रस्तुत कहानी में बड़े-बड़े अफसरों और शहर के गण्यमान्य व्यक्तियों को माध्यम बनाकर यह सिद्ध करना चाहा है कि बड़े छोटे कोई भी बात को अतिशयोक्ति के साथ कहने की इस प्रवृत्ति से मुक्त नहीं हैं ।

मिस्टर रघुपतिसहाय यों तो इंजीनियर थे किन्तु उनका स्वभाव दार्शनिकों जैसा था । एक दिन एक घटना से प्रभावित होकर उसके मनोवैज्ञानिक पहलू पर विचार कर वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि "एक बात दस आदमियों में घूमने फिरने के बाद कितनी बदल जाती है । कभी-कभी तो असली बात का रुख ही हास्यास्पद हो जाता है । इसका कारण है कि हम सब अतिशयोक्ति से काम लेते हैं - अतिशयोक्ति मनुष्य का गुण है । इस अतिशयोक्ति से कोई बच नहीं सकता, कितना भी पढ़ा-लिखा, सुसंस्कृत और जिम्मेदार आदमी वह हो।"[1] इस सत्य के बारे में जब रघुपतिसहाय अपने मित्रों से कहते हैं, जो समाज के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में से हैं, तो सभी मित्र इस तथ्य से असहमत होते हैं । इस पर रघुपतिसहाय प्रस्ताव करते हैं कि इस तथ्य की पुष्टि के लिए एक बात कही जाय और उस बात को हर व्यक्ति अपने पास के दूसरे आदमी से कान में कहे और प्रारम्भ की बात व अंत की बात दोनों कागज पर लिखकर रख दी जायँ । रघुपतिसहाय बात प्रारम्भ करते हैं -' कल रात लाला रामनाथ के यहाँ दावत थी, बड़े जश्न रहे ।' यही बात विभिन्न मोड़ लेते हुए इस वाक्य से समाप्त होती है -' कल रात लाला रामनाथ की बीबी तमाम गहना-नकदी लेकर उनके सेक्रेटरी भूषन के साथ भाग गईं ।'

सभी मित्रों में निश्चित हुआ कि अगले शनिवार की पार्टी में ये कागज खोले जायँ। लेकिन बात समाप्त करनेवाले व्यक्ति अजितप्रसाद को चैन नहीं पड़ी और उन्होंने उस बात की

1- मेरी कहानियां - पृ0 217

पुष्टि करनी चाही और जिन लाला रामनाथ से उपर्युक्त बात सम्बंधित थी उन्होंने अजित-प्रसाद पर मानहानि का दावा दायर कर दिया। मुकदमे का भले ही कोई ठोस परिणाम न निकला हो क्योंकि मुजरिम अजितप्रसाद की ओर से उनके अन्य मित्र गवाही देनेवाले थे किन्तु रघुपतिसहाय की इस बात की पुष्टि तो पूर्णरूपेण हो गयी कि प्रत्येक मनुष्य में बात का बतंगड़ बनाने की प्रवृत्ति विद्यमान है।

वर्मा जी की व्यंग्यप्रधान कहानियाँ अनूठे विषय और अनोखी सूझबूझ को लेकर लिखी गयी हैं। प्रस्तुत कहानी इस बात का ज्वलंत प्रमाण है।

<u>खिलावन का नरक</u> :- अर्थ की शक्ति को प्रदर्शित करने के लिए वर्मा जी ने अनेक कहानियाँ लिखी हैं। `खिलावन का नरक` भी आर्थिक विपन्नता से त्रस्त एक युवक की कहानी है। खिलावन अपने पारिवारिक जीवन को सुखी बनाने के लिए ही अपनी नव-विवाहिता सुखिया और परिवार के अन्य सदस्यों को छोड़ बम्बई चला गया था किन्तु तीन वर्ष बाद जब वह अपने गाँव लौटा तो उसके पास टिकट खरीदने के लिए भी पैसे नहीं थे। मिल में दो महीने की हड़ताल ने उसे पैसे-पैसे का मोहताज बना दिया था और वह अपनी जान छुड़ाकर बम्बई से भाग आया था। उसके मन में भयानक द्वन्द्व था कि परिवार के लोगों को उसकी स्थिति देख कैसी निराशा होगी किन्तु सुखिया का प्रेम उसे घर की ओर खींच रहा था, किन्तु उसी सुखिया को आर्थिक लोभ में जिलेदार के हाथों अपने शरीर बेचते देख वह पुन: बम्बई के नारकीय जीवन को भोगने वापस लौट पड़ा।

व्यक्ति कितने भी आर्थिक कष्ट सहन कर सकता है किन्तु स्वजनों का विश्वास उसे परिस्थितियों से संघर्ष करने के लिए प्रेरित करता रहता है परन्तु जब विश्वास ही टूट जाय तो व्यक्ति का जीवन साक्षात् नरक बन जाता है। वर्मा जी ने अपने जीवन के कुछ वर्ष बम्बई में बिताये। वहाँ उत्तर भारत के निम्न श्रेणी के ऐसे जाने कितने व्यक्ति हैं जो अपनी जीविका अर्जित करने के लिए अपना घर द्वार छोड़कर बम्बई में पड़े हैं, ऐसे ही किसी व्यक्ति की जीवन कथा को सुनने का अवसर वर्मा जी को प्राप्त हुआ हो, यह सहज स्वाभाविक है। प्रस्तुत कहानी में आर्थिक असमानता के शोषण की नारकीय वेदना भुगतने-वाले युवक की मर्म कथा कही गयी है।

<u>आवारे</u> :- आर्थिक विपन्नता और बेकारी ने भारतीय युवकों के व्यवहार को कितना अनउत्तरदायित्वपूर्ण और अविवेक युक्त बना दिया है - इसी विचार को लेकर वर्मा जी ने बड़े मार्मिक व्यंग्य से इस कहानी के कलेवर को सुसज्जित किया है। फिल्मों व की रंगीली

दुनिया से प्रभावित होकर जाने कितने युवक नित्य ही बम्बई पहुँचा करते हैं और उस मोह-नगरी की माया उनका सर्वस्व खींचकर उन्हें पैसे-पैसे का मोहताज बना देती है। ये सुनहरे भविष्य के स्वप्न देखने वाले युवक स्वार्थ सिद्ध करने का पाठ सीखकर, भावना और चेतना शून्य होकर बेकारी और गैर-जिम्मेदारी की जिन्दगी बिताने के लिए विवश हो जाते हैं इस अत्यंत महत्वपूर्ण समस्या पर वर्मा जी ने इस कहानी के द्वारा प्रकाश डाला है। पीछे कहा जा चुका है कि वर्मा जी का कुछ समय बम्बई में बीता था, उस समय के कुछ अनुभवों को उन्होंने इस कहानी में अभिव्यक्ति दी है।

उत्तरप्रदेश के विभिन्न नगरों से पाँच युवक बम्बई आते हैं भविष्य की सुन्दर कल्पनाएँ लेकर किन्तु इस स्वार्थी नगरी से संत्रस्त होकर वह एक कमरे में रहने लगते हैं। बम्बई के लोग उन्हें तरह-तरह से आश्वासन देते हैं, किन्तु वे आश्वासन कभी पूरे नहीं होते और इन युवकों को फिल्म लाइन का मोह छोड़कर विभिन्न प्रकार के छोटे-मोटे काम करके अपनी जीविका चलाने के लिए विवश होना पड़ता है।

शिवशंकर पाण्डे अपनी भावी गँवार और बदशक्ल पत्नी से पीछा छुड़ाने के लिए और फिल्मी लाइन की किसी सुन्दरी को अपना कर अपने जीवन को सुखमय बनाने के लिए आया था किन्तु उसे बहुत कम पैसे पर एक्स्ट्रा का काम मिल पाता है। अत: उसने अपना खर्चा पूरा करने के लिए अपने कमरे में दूसरे युवकों को किरायेदार के रूप में ठहरा लिया था। जसवन्तसिंह का गला अच्छा था और मित्रों ने उसकी प्रतिभा से प्रभावित होकर उसे बम्बई भेज दिया था। जसवन्तसिंह की प्रतिभा को बम्बई के अनेक लोगों ने सराहा, किन्तु उसे फिल्मों में काम किसी तरह नहीं मिल सका और उसे ट्यूशन करके अपना गुजारा करना पड़ा। मिस्टर परमेश्वरीदयाल वर्मा तो एक अंग्रेजी कम्पनी में असिस्टेन्ट मैनेजर की नौकरी करने बम्बई ा आये थे, किन्तु उनके द्वारा नशे में अपने मैनेजर [illegible] को मारने की घटना के कारण उन्हें अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा और उन्हें कमीशन एजेन्सी का कारोबार करके सब्र करना। इस काम में उन्हें अपना ठाठबाट बनाए रखने के लिए व्यय अधिक करना पड़ता था और धन प्राप्ति की आशा में ही संतोष करना पड़ता था। सबसे अधिक रोचक कहानी छबीलदास गुप्ता की थी। छबीलदास एक वेश्या की लड़की सुशीला से प्रेम करने लगे, उनके पिता ने जबर्दस्ती उनका विवाह एक दूसरी लड़की से कर दिया और उनके ससुर ने उन्हें धमकी दी कि यदि छबीलदास और सुशीला के बारे में उन्होंने कोई शिकायत सुनी तो वह बीच चौक में जूतों से छबीलदास की मरम्मत करवायेंगे। छबीलदास अपनी प्रेमिका को लेकर

और राजनीति में कुछ काम करने के लिए बम्बई पहुँच जाते हैं। छबीलदास को तो कोई पूछता नहीं और उन्हें क्लर्की करनी पड़ती है। सुशीला के रूप के कारण छोटे-मोटे नेता और सेठ उसे हथियाना चाहते हैं और इस प्रकार छबीलदास को सुशीला से भी हाथ धोना पड़ता है। कमरे में आने वाले पाँचवे किरायेदार रामगोपाल सुशीला के संकट काल में सुशीला को फिल्म कम्पनी में काम दिलाकर स्वयं भी फिल्म में घुसने का यत्न करते हैं लेकिन रामगोपाल को भी निराश होना पड़ता है जब फिल्म डाइरेक्टर और फिल्म फाइनेन्सर सेठ सुशीला को लेकर चम्पत हो जाते हैं। सुशीला को तो फिल्म में काम मिल जाता है उसके रूप और यौवन के कारण किन्तु छबीलदास और रामगोपाल बम्बई में बेकारी और आवारों की जिन्दगी गुजारने के लिए रह जाते हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त पाँचों युवक आर्थिक अभाव और कोई निश्चित काम के बिना जिस प्रकार का जीवन व्यतीत करते हुए दिखलाए गए हैं, उससे भारतीय युवक की अनुत्तरदायित्वपूर्ण और निर्लक्ष्य-भ्रमित स्थिति का सुन्दर अंकन हुआ है।

<u>राख और चिनगारी</u> :- प्रस्तुत कहानी में एक ऐसी नारी की व्यथा कही गयी है जो अपने परिवार के आर्थिक उत्तरदायित्व के कारण अपने व्यक्तिगत जीवन को दु:खमय बनाने के लिए विवश हो जाती है। आर्थिक प्रश्न पारिवारिक ममता और प्रेम सम्बंध के मध्य एक दीवार की भाँति उपस्थित हो जाता है। इसी अन्तर्द्वन्द्व से गुजरकर उसे जीवन भर की कुंठा का आलिंगन करना पड़ता है।

गीता अपने पिता और भाई को खोकर अपनी माँ, भाभी और भाई के बच्चों के भरण-पोषण के लिए नौकरी करती थी। पिता तो बहुत बचपन में ही काल कवलित हो गये थे, बड़े भाई ने भी उसे बी० ए० पास कराके और पूरे परिवार का दायित्व उस पर छोड़कर इस दुनिया से दृष्टि फेर ली थी। भाई को परिवार के भरण-पोषण का वचन देकर गीता ने अपने जीवन का लक्ष्य माँ, भाभी और उनके बच्चों तक ही सीमित कर दिया था। तभी उसका परिचय एक ऐसे युवक से हो गया जो भावुक था, कवि था। उसके सम्मोहक व्यक्तित्व ने गीता के नितांत -नीरस और मरुदंड सदृश्य हृदय में नन्दन-वन सी हरीतिमा भर दी। प्रेम के पागलपन ने कुछ समय के लिए गीता को, कठोर उत्तरदायित्व को विस्मृत कर देने के लिए विवश कर दिया और संभवत: गीता अपने उत्तरदायित्व के प्रति आँखें बन्द करके अपने व्यक्तिगत सुख को पाने में सफल भी हो जाती किन्तु तभी ममता ने उसके पैरों में बेड़ियाँ पहना दीं। गीता अपनी माँ और भाभी से छिपाकर अपने विवाह की सारी

तैयारी कर चुकी थी, उसके मन में परिवार की ममता को लेकर मनोमंथन भी चल रहा था, किन्तु वह सब तरफ से आँखें बन्द करके अपने प्रणय सम्बंध को पूर्ण करने का समस्त आयोजन कर चुकी थी तभी उसके विवाह के एक दिन पूर्व उसकी माँ और भाभी को उसके विवाह की कोएक की सूचना मिल जाती है और वह गीता के विवाह को अधिक धूमधाम से करने के लिए उसके पास पहुँच जाती हैं। वह दोनों गीता के विवाह की पूर्ण मनोयोग से तैयारी करने लगती हैं और भतीजा व भतीजी बाजे व आतिशबाजी के सपने देखने लगते हैं, किन्तु गीता इन लोगों को देखकर अपने कर्तव्य को नकार नहीं पाती और अपने भाई के विश्वास की रक्षा करने का निश्चय कर लेती है। गीता खुदगर्जी से ऊपर उठने का निर्णय तो ले लेती है किन्तु उसे अनुभव होता है कि " मैं उस चिनगारी की भाँति हूँ जो राख से बेतहाशा ढक गई है। चिनगारी जल रही है और राख बढ़ती जा रही है। और इस समय तो मैं अपने अन्दरवाली चिनगारी की जलन को भी नहीं अनुभव कर पा रही हूँ, मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं राख हूँ - राख हूँ, राख हूँ।"[1]

गीता के चरित्र के माध्यम से वर्मा जी ने उन अनेक युवतियों की पीड़ा को व्यक्त किया है जिनका जीवन कर्तव्य और अर्थ की चक्की में पिसकर नि:शेष हो जाता है। भावना और चेतना शून्य होकर वह राख की ढेरी के सदृश्य प्राणहीनों-सा जीवन व्यतीत करने के लिए विवश हो जाती हैं। इस कहानी में राख और चिनगारी की उपमा बड़ी सार्थक और मार्मिक बन पड़ी है। इस कहानी में भारत के वर्तमान आर्थिक ढाँचे व सामाजिक शोषण को भी चित्रित किया गया है। वर्तमान सभ्यता और शिष्टाचार के पीछे कितना ढोंग, प्रदर्शन, मक्कारी व स्वार्थपरता छिपी रहती है तथा नौकरी की गुलामी में व्यक्ति किस प्रकार भावनाशून्य होकर पिसता रहता है, इसकी अभिव्यक्ति बड़ी ही सजीवता से इस कहानी में हुई है।

<u>उन्माद</u> :- भगवती बाबू ने अपनी अनेक कहानियों में प्रेम सम्बंधी विभिन्न समस्याओं को उठाया है। 'उन्माद' कहानी में प्रेम की उस अवस्था का चित्रांकन किया गया है जब वह पागलपन अथवा उन्माद का रूप धारण कर लेता है। प्रेम में वासना का प्राधान्य तो प्राय: दिख जाता है किन्तु विकट समस्या तो उस समय उठ खड़ी होती है जब प्रेम में उन्माद की स्थिति उत्पन्न हो जाये।

1- राख और चिनगारी- पृ० 277

मधुसूदन शर्मा एक प्रतिष्ठित चित्रकार थे, उनका सम्बंध एक विवाहिता स्त्री नीलिमा से हो जाता है। नीलिमा की अतिशय निकटता के कारण मधुसूदन न चाहते हुए भी उसके वासनोन्माद में बह जाते हैं। वासना का आवेग समाप्त होने पर और अपने प्रणय की कुचर्चा से घबराकर मधुसूदन नीलिमा से दूर होने का उपाय ढूंढ निकालते हैं। वह अपने परिवार को अपने पास बुलाकर नीलिमा से एकांत में मिलने का मार्ग बंद कर देना चाहते हैं, किन्तु इस व्याघात से नीलिमा का प्रेम और अधिक उद्दाम रूप धारण कर लेता है। वह मधुसूदन से स्पष्टरूप में कह देती है कि वह उसके प्रेम को पाने के लिए पति और बच्चे सब कुछ छोड़ देने को तैयार है, किन्तु मधुसूदन अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा को बचाने के लिए विदेश चले जाते हैं। इस प्रकार उन्हें नीलिमा की वासना से मुक्ति मिल जाती है किन्तु नीलिमा का आकर्षण उन्हें पुन: स्वदेश की ओर खींच लाता है। इस बार नीलिमा भी अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा और पारिवारिक पवित्रता के मोह में मधुसूदन से अधिक मेलजोल न बढ़ाने का संकल्प करती है। किन्तु कुछ वर्षों पश्चात् पुन: मधुसूदन के मिलने पर वह अपना धैर्य खो बैठती है और परिवार व समाज का बंधन त्याग पूर्णरूपेण मधुसूदन की हो जाना चाहती है। वह निर्णय कर लेती है कि वह अपने परिवार और समाज को छोड़कर मधुसूदन के साथ विदेश जाकर अपना नया घर-संसार बसायेगी किन्तु मधुसूदन नीलिमा के प्रेमोन्माद से घबड़ाकर भाग खड़े होते हैं नीलिमा के प्रेम के उन्माद का 'शॉक ट्रीटमेन्ट' द्वारा इलाज करने के लिए।

प्रस्तुत कहानी की विशेषता यह है कि इसमें नीलिमा-मधुसूदन के प्रणय सम्बंध को सतीश व गीता के प्रणय के परिप्रेक्ष्य में रखकर प्रेम की दो पृथक्-पृथक् स्थितियों को दर्शाने का यत्न किया गया है। गीता अपने मनोवांछित युवक की पूर्ण प्रेम निष्ठा पाकर य इतनी संतुष्ट हो जाती है कि उसमें संयम की पराकाष्ठा आ जाती है। वह सतीश के सुखी जीवन के लिए स्वार्थ छोड़ उसके जीवन से हमेशा-हमेशा के लिए हट जाने का निर्णय कर लेती है। दूसरी ओर नीलिमा अपने व्यापारी पति के साथ सभी सुख वैभव के होते हुए भी संतुष्ट नहीं रह पाती। पृथक्-पृथक् रुचि और विचार वाले द दो व्यक्तियों के वैवाहिक बंधन में बंधने का परिणाम यह होता है कि उनमें से एक अपनी पसंद का व्यक्ति मिलने पर समस्त बंधनों को त्याग उसे प्राप्त करने की चेष्टा में संलग्न हो जाता है। इसी प्रकार नीलिमा मधुसूदन से मिलने पर एक उन्मादिनी की भाँति व्यवहार करने लगती है, उसे परिवार और समाज किसी की भी चिन्ता नहीं रह जाती। प्रक द्रष्टव्य है कि प्रेम में संयम और उन्माद की स्थितियाँ वह क्रमश: 24-25 की युवती और 35-40 वर्ष की अधेड़ स्त्री में दिखाई गई हैं जबकि सामान्यत: इसके विपरीत ही होना चाहिए था किन्तु इसका

कारण भी परोक्षरूप से लेखक ने दे दिया है ।

एक बड़े अन्तराल के बाद वर्मा जी पुन: कहानी-लेखन में सक्रिय हुए हैं । उन्होंने समसामयिक समस्याओं को लेकर 12 कहानियाँ सारिका के लिए लिखी हैं । ध्यातव्य है कि वर्मा जी ने बहुत पहले 'दा बाँके', 'तिकड़मीलाल', 'अनशन' जैसी अत्यंत सफल व्यंग्यकथाएं लिखी थीं । आज उनका कहानीकार पुन: चेतन हो उठा है और 'सारिका' में प्रकाशित कहानियों के माध्यम से एक बार पुन: उनका व्यंग्यकार का रूप पाठक के समक्ष उपस्थित हुआ है । वर्तमान युग के विशिष्ट संदर्भों और बदलते व जीवन-मूल्यों को इन कहानियों का लक्ष्य बनाया है । उपर्युक्त 12 कहानियों में से 10 कहानियों की कथावस्तु का परिचयात्मक विवरण भी यहाँ प्रस्तुत है ।

<u>क्षमायाचना :-</u> वर्तमान युग की सर्वाधिक घातक एवं चर्चित समस्या मँहगाई की है । आजकल छोटा-बड़ा कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं जो मँहगाई के क्रूरतम अभिशाप का शिकार न हो । इसी समस्या को क्षमायाचना में आधार बनाया गया है ।

ज्ञानप्रकाश अपने बदलते हुए परिवेश से समझौता करके अपना हाथ समेटकर चलता है, किन्तु उसके पिता रविप्रकाश अपनी पुरानी आनबान और मिथ्याभिमान को छोड़ नहीं पाते । किन्तु पेंशन पाने के बाद मँहगाई का जहर धीरे-धीरे उन पर भी चढ़ने लगता है । इतना ही नहीं, उनके मित्र भी मँहगाई के व्यापक प्रभाव की पुष्टि करते हैं और उन्हें सलाह देते हैं कि वे झूठी शान छोड़कर परिस्थितियों से समझौता करके चलना सीख लें । अब रविप्रकाश को अपनी गलती का अहसास होता है और वह अपने पुत्र से 'क्षमायाचना' करने का निश्चय करते हैं। उन्हें अनुभव होता है कि उन्होंने अपने पुत्र की बुद्धिमत्ता की सराहना करने के बजाय उसका अकारण अपमान कर दिया था । एक छोटी सी कहानी में मिथ्याभिमान के उच्च धरातल से यथार्थ की भूमिका पर उतरने की क्रमिक यात्रा बहुत सटीक एवं सुन्दर बन पड़ी है ।

<u>संकट :-</u> मँहगाई की मार किसी वर्ग-विशेष तक सीमित नहीं है । रविप्रकाश जैसे उच्च पदस्थ अधिकारी की ही भाँति लाल रत्नाकर सिंह हैं जो जमींदारी उन्मूलन से पूर्व के एक ताल्लुकदार के पुत्र हैं । किन्तु शक्ति और वैभव के हस्तांतरण से उनकी स्थिति अत्यंत शोचनीय हो गयी है । पुराने वैभव और आन-बान को तत्काल भुलाना इस वर्ग के लिए अत्यंत दुष्कर है । रत्नाकर सिंह वर्तमान परिस्थिति को समझते हुए भी अपनी पत्नी के आग्रह के कारण अपने पुत्र का मुंडन संस्कार धूमधाम से करने का निश्चय कर लेते हैं । वे अपने मित्रों

के परामर्श से एक विशाल भोज और कवि-सम्मेलन का आयोजन करने की योजना बनाते हैं। वे एक अच्छे कवि के लिए पचास-साठ रूपया देने की हिम्मत बाँध लेते हैं, परन्तु कवि अभिशप्त एक सौ बीस से नीचे उतरने के लिए किसी प्रकार राज़ी नहीं होते। रत्नाकरसिंह इतना बड़ा आयोजन ठान तो लेते हैं, किन्तु इसके लिए किसी का अहसान लेना उन्हें स्वीकार नहीं। भोज और उसके लिए शराब की व्यवस्था तो उनके भाई कर देते हैं किन्तु कवि अभिशप्त की फीस देना उनके लिए समस्या हो जाती है। होता यह है कि उनके भाई ने भोज के लिए अपने फार्म से सब्जी भी भिजवायी थी, किन्तु वह देर से पहुँचती है और उसका उपयोग नहीं हो पाता। उस सब्जी को देख रत्नाकर सिंह के भाई और मित्र उन्हें सलाह देते हैं कि वे सब्जी बिकवाकर नकद पैसा प्राप्त कर लें। रत्नाकर सिंह वह सब्जी लेकर कवि को भेजने लखनऊ जाते हैं और फीस के रुपयों की जगह सब्जी के टोकरे कवि के पास छोड़ वहाँ से रफूचक्कर हो जाते हैं।

अब संकट कवि के समक्ष उपस्थित होता है, वह सब्जी के टोकरे रिक्शे पर रखवाकर अपने एक मित्र के पास पहुँचते हैं और वह उन्हें सलाह देते हैं कि सब्जी साइकल-ठेला पर रखकर बेच आवे और पैसा अपनी जेब के हवाले करे। कवि को यह कठिन लगता है, उस समय उनके मित्र के पिता का कथन द्रष्टव्य है -"ससुर, रात-रात भर पतुरिया ऐस महफिल मां गला फाड़-फाड़ कर विख्यात हो तो सब सरम नहीं आवत, सौदा बेचे मां नानी मरत है। निशातगंज बाजार के दो चक्कर लगाय आओ, अभी तुम्हारा संकट दूर हुआ जाता है।"[1]

इस कहानी के माध्यम से वर्मा जी ने अपने समाज की झूठी शान पर तो व्यंग्य किया ही है, साथ ही समाज की इस विकृति पर भी प्रखर प्रहार किया है, जिसमें मेहनत करके जीविका चलाने वाले काम को शर्म और उपहास की बात माना जाता है।

<u>रंगीलेलाल तीर्थयात्री</u> :-इस कहानी में व्यापारी-वर्ग के उत्थान, प्रभाव, तथा उनके व्यापार-कौशल के रहस्यों का उद्घाटन व्यंग्यशैली में किया गया है। प्रसंगवश देश की शासन व्यवस्था, फारेन सर्विस और वर्तमान युग में ईमानदार व्यक्तियों के पराभव की ओर भी दृष्टिपात किया गया है।

कहानी आत्मकथात्मक शैली (प्रथम पुरुष शैली) में लिखी गयी है।

1- सारिका, जून 1974-पृ० 59

कथा के वक्ता अविनाशचन्द्र इंडियन फारेन सर्विस में एक उच्च पद पर कार्य करने के बाद रिटायर हुए हैं। वह अपने पुत्र, जिसे अन्याय और बेईमानी का विरोध करने के कारण सीमेन्ट फैक्टरी से हस्तांतरित कर दिया जाता है, की सिफारिश करने के लिए लखनऊ जाते हैं। पुत्र का काम अपनी मक्खन लगाने की कला के द्वारा पूरा करके वह अपने बचपन के मित्र बनवारीलाल,(जिसने हाईस्कूल पास करके स्वराज्य ट्रेडर्स के नाम से एक छोटी-सी दूकान खोल ली थी, की तलाश में निकलते हैं। इस खोज में उन्हें पता चलता है कि बनवारीलाल तो लखनऊ के सबसे बड़े व्यापारी(सेठ) बन गये हैं।

जब अविनाशचन्द्र बनवारीलाल से मिलने पहुँचते हैं तो वह उनका परिचय अपने पुत्रों से कराते हैं। बनवारीलाल के तीन बड़े पुत्र तो उनके व्यापार को सम्भाले हैं किन्तु चौथा पुत्र अपना परिचय रंगीलेलाल तीर्थयात्री के नाम से करवाता है तो अविनाशचन्द्र चक्कर में आ जाते हैं। इस तीर्थयात्री का क्या मतलब है ? इसका विवेचन बनवारी लाल के शब्दों में द्रष्टव्य है - 'जितने पुराने तीरथ हैं, इस युग में उनका महातम जाता रहा है। अब तो कृष्ण मंदिर नाम के एकमात्र तीरथ का महातम है, समझे। कृष्ण मंदिर के मतलब हैं जेल। तो यह अक्सर जेल की यात्रा कर लेता है। ------- तो तीन कामकाजी लौंडे थे, उन्हें तो हमने धंधे से लगा दिया, रहा यह आवारा और मुंहजोर रंगीले, तो जब कभी हमारी किसी फर्म में छापा पड़ता है, पकड़ा-धकड़ा जाता है, तब यह सामने कर दिया जाता है। इन फर्मों के मालिकों में रंगीले भी तो है। साल भर में एकाध बार महीना-पंद्रह दिन के लिए यह हंसते-खेलते कृष्ण-मंदिर की तीर्थयात्रा कर आता है।'[1] इस तीर्थयात्रा के कारण रंगीलेलाल अपने को तीर्थयात्री कहता है।

व्यापारियों ने अपने काले धंधे के लिए बड़े विचित्र तरीकों का आविष्कार किया है। वे अपनी चालबाज़ियों से सबको ठगते हैं, किन्तु इसके लिए मात्र वही उत्तरदायी नहीं हैं, सरकार की नीतियाँ इसके लिए अधिक जिम्मेदार हैं। बनवारीलाल इसी तथ्य को उजागर करता है- 'यह सुसरी सरकार---- तरह-तरह के कानून बना रखे हैं इसने। और अगर कानून पर चलो तो कंगाल हो जाओ, कंगाल। कांग्रेस को चंदा दो, मंत्रियों का पेट भरो, अफसरों को रिश्वत दो, बाबुओं को नजराना दो, चपरासियों को बख्सीस दो, तो गये अपने काम से। --- तो सरकार ने हमारी व्यक्तिगत स्वतंत्रता छीन ली है। जहाँ देखो, कोटा, परमिट, लिखा-पढ़ी,

---

1- सारिका- जुलाई 1974, पृ० 65

खानापूरी ---- जिंदगी हराम कर दी है इन ससुरों ने। अब तुम्हीं बताओ कि हम व्यक्तिगत स्वतंत्रता की कैसे रक्षा करें ?"[1]

सरकार (शासन व्यवस्था) के काले कानून ने व्यापारियों को (साथ और बहुत -से लोगों को) बेईमानी करना सिखाया है और उनके दो पाटों के बीच सामान्य जनता पिसती है और पिसते हैं वे लोग जो ईमानदारी और सच्चाई से अपना काम करते हैं और अन्याय का प्रतिकार करते हैं - यही इस कहानी का अभिव्यंग्य है।

वसीयत :- वसीयत एक अत्यंत कुतूहलपूर्ण और रोचक कहानी है। वसीयत को रुक-रुक कर सुनाने में कहानीकार ने अनूठी कल्पना का परिचय दिया है।

आचार्य चूड़ामणि मिश्र भारतीय दर्शन के प्रकाण्ड पंडित है और उन्होंने अपने जीवन में स्वयं कंजूसी से रहकर अपार सम्पत्ति एकत्र कर लिए हैं। मरते समय वह अपनी वसीयत अपने निष्ठावान शिष्य जनार्दन जोशी (मैं-कहानी का नैरेटर) के हाथ में सौंप जाते हैं और उन्हें बता देते हैं कि उनकी वसीयत उनके मरने के साथ ही लागू हो जायेगी।

चूड़ामणि स्वयं बड़े धर्मनिष्ठ एवं संस्कारवान् व्यक्ति थे, किन्तु उनके पुत्र-पुत्रियाँ और पुत्रवधू आदि अधुनातन एवं प्राचीन मूल्यों में अनास्था रखने वाले हैं। चूड़ामणि अपनी वसीयत में सभी लोगों को उनकी बुराइयों की टीका-टिप्पणी करते हुए और गाली सुनाते हुए अपनी सम्पत्ति का भाग दे जाते हैं, किन्तु अपने शिष्य जनार्दन जोशी और मँझली लड़की सुशीला, जिनके प्रति उनका अपार स्नेह है और जिनकी विनम्रता एवं भावना की वह प्रशंसा करते हैं, को क्रमशः सूखा आशीर्वाद और अपना प्रिय तोता दे जाते हैं। चूड़ामणि के विचित्र स्वभाव का चित्रण वर्मा जी ने नाटकीय पद्धति में सफलतापूर्वक किया है।

तोता लेकर जब जनार्दन अपने घर चलते हैं तो तोता स्वयं को 'पंडित' और उन्हें 'बुद्धू' कहता है। बार-बार ऐसा करने से जनार्दन अपने 'आचार्य' के प्रति झुंझला उठते हैं और तोते को उड़ा देते हैं।

धनी व्यक्तियों की मृत्यु पर उनकी सम्पत्ति को लेकर कैसी छीना-झपटी मचती है ? लोग कुछ न मिलने पर मरनेवाले को खूब खरी-खोटी सुनाते हैं और धन मिल जाने पर उसकी आत्मा के स्वर्गस्थ होने की कामना करते हैं। अर्थात् आजकल सारे सम्बन्धों का उत्स एकमात्र अर्थ है। अर्थ ने मनुष्य की आत्मा को इतना पतित बना दिया है कि पत्नी, बेटे-बेटियाँ कोई भी अर्थ के अभाव में व्यक्ति की ममता का मूल्यांकन नहीं कर पाते। इन

1- सारिका- जुलाई 1974, पृ० 65

इन अर्थाधारित जीवन-मूल्यों का बड़ा नग्न चित्र वर्मा जी ने `वसीयत` में खींचा है। ऐसे स्वार्थपरक दृष्टिकोण का बड़ा यथार्थ अंकन-चूड़ामणि के पारिवारिक वातावरण के द्वारा कहानीकार ने किया है।

समझौता :- इस कहानी में एक पति-पत्नी के झगड़े और समझौते को आधार बनाकर वर्मा जी ने अफसरों, स्कूल व्यवस्थापकों और कुछ चमचा-टाइप आदमियों (कन्हैयालाल सांवरिया) आदि की पोल खोली है।

जयकृष्ण शर्मा एक रेफ्रीजिशन इक्विपमेंट नामक कंपनी के बैंक ब्रांच मैनेजर हैं और बड़े चलते-पुर्जे आदमी हैं, उनकी पत्नी रत्नप्रभा `असीम सुंदरी किन्तु अतिशय कठोर मुद्रा वाली` युवती हैं। जयकृष्ण शर्मा अपनी फर्म की बिगड़ती स्थिति को संभालने के लिए कृषि-आयुक्त चंद्रप्रकाश की स्टेनो एक अनुराधा सेंजानी को एक बहुमूल्य साड़ी देकर पटाने की योजना बनाते हैं। साड़ी खरीदकर वह एक पत्र भी अनुराधा के नाम लिखते हैं, जिसमें उनकी उच्छृंखलता एवं भावुकता प्रकट हो जाती है। परन्तु वह पैकेट धोखे से उनकी पत्नी के पास पहुँच जाता है और वह क्रोध से आग बबूला होकर अपने पिता के यहाँ चली जाती हैं। जयकृष्ण को जब यह पता चलता है तो वह अपने मित्र ज्ञानेन्द्रनाथ जी (मैं- कहानी का नैरेटर) को साथ लेकर अपनी पत्नी को मनाने पहुँचते हैं। उस अवसर पर रत्नप्रभा क जो व्यवहार अपने पति के साथ करती है और पति जिस प्रकार पत्नी के समक्ष घिघियाते हैं- उसके वर्णन के द्वारा वर्मा जी ने आधुनिक पति-पत्नी-सम्बंधों का अत्यधिक यथार्थ एवं वस्तुपरक अंकन किया है। जरा-सी गलतफहमी को लेकर तलाक की बात होने लगती है। जयकृष्ण द्वारा कायरता प्रकट करने पर वह बड़ी कृपा करके सशर्त समझौता करने पर सहमत हो जाती हैं। उन शर्तों में उनके बेईमान और जालसाज पिता का सम्मान करना, ब्लैक-मार्केटिर कन्हैयालाल को अभिन्न मित्र मानना (इसी चालबाज आदमी के द्वारा अनुराधा को साड़ी देने का रहस्य खुलता है) आदि भी शामिल थीं। जयकृष्ण इन शर्तों को स्वीकार कर प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर करके अपनी पत्नी से समझौता करते हैं। इस कहानी में वर्मा जी की मीठी चुटकियाँ एवं संक्षिप्त विवरण शैली में लिखा नोट विशेष आकर्षण उत्पन्न कर देते हैं। नोट द्रष्टव्य है -`इस समझौते के बाद मेरा सबसे प्यारा दोस्त जयकृष्ण शर्मा मुझसे छूट गया। कभी भूले-भटके मिल जाता है तो दो-चार औपचारिक बातें हो जाती हैं। स्काच व्हिस्की का मजा ही भूल गया हूँ। और सबसे बड़ी बात तो यह कि डालडा, मिट्टी का तेल, साबुन आदि न जाने कितनी चीजों के लिए तरसना पड़ रहा है, क्योंकि कन्हैयालाल

साँवरिया अब जी-जान से हरिहर हाईस्कूल और हरिहर सेवा-संस्थान के धंधे में लग गया है।'[1]

<u>गनेसीलाल का रामराज</u> :- इसमें एक ऐसे युवक गनेसीलाल की कहानी है जो अपनी चालाकी के बल पर एक मामूली संवाददाता से एक विधायक बन जाता है और उसे विश्वास है कि शीघ्र ही वह मंत्री भी बन जायगा। बड़े-बड़े नेताओं की तरह उसका कहना है कि 'देश में रामराज की स्थापना हो रही है, भविष्य उज्ज्वल है।'

इस कहानी के सबसे रोचक एवं व्यंग्यात्मक अंश वे हैं जिनमें गनेसीलाल देश की विभिन्न समस्याओं (मँहगाई, वस्तुओं का अभाव आदि) के कारण और उनके निदान की चर्चा करता है। महेन्द्र त्यागी, जिन्होंने उसे अपने पत्र 'शंखनाद' में संवाददाता के रूप में रखा था, जब उससे सरकार के द्वारा रेल का किराया बढ़ाये जाने की चर्चा करते हैं तो वह कहता है -'गोरखपुर, गोंडा, फतहपुर, मैनपुर का देहाती बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली, मद्रास का चक्कर लगा रहा है। वक्त की बरबादी, धन की बरबादी। लाखों-करोड़ों आदमी रेलों में ठसाठस भरे, देश में समस्याएँ पैदा करते हुए और बढ़ाते हुए घूम रहे हैं। इनको हर जगह भोजन चाहिए, आवास चाहिए, सुख-सुविधा चाहिए। पूछिए, इनके बाप-दादों ने कभी शहर का मुँह देखा था ? पैदल चलते थे, बहुत क हुआ तो जिला कचहरी हो आये। चना चबेना, सत्तू कंधे पर लदा हुआ। तो सरकार ने बढ़ा दिया रेल का किराया। करो साले सफर, देखें कैसे करते हो। न सफर करोगे, न रूपया खर्च होगा, न रूपया बरबाद होगा, न समस्याएँ बढ़ेंगी। गरीबी दूर।'[2]

अपने ऐसे ही तर्कों और निदानों के आधार पर गनेसीलाल ने रामराज की परिकल्पना की है और उसके प्रसार-प्रचार के लिए 'रामराज' नामक पत्र निकालने की उसकी योजना है। इस सम्पूर्ण कहानी के माध्यम से वर्मा जी ने उन नेताओं की ओर व्यंग्य किया है, जो अपनी चालबाजी या सिफारिश आदि के आधार पर नेता बन जाते हैं, और जनता के हितों की रक्षा करने के बजाय जनता को झूठे आश्वासन देते हैं और भाषण व उपदेशों से जनता को संतुष्ट करना चाहते हैं।

<u>दिल का दौरा</u> :- इस कहानी में उच्च पदस्थ अधिकारियों के मिथ्याडम्बर और चरित्र-हीनता का कच्चा चिट्ठा कहानीकार ने खोलकर रख दिया है।

1- सारिका, अक्तूबर 1974 -पृ0 47

2- वही- नवम्बर 1974, पृ0 44

गौरमोहन ज्ञानी परिवहन विभाग के सचिव हैं और अपने अंगूठा छाप मंत्री का पूरा विश्वास उन्हें प्राप्त है। अपने काम में भी वह पूर्ण दक्ष हैं। रोज शाम को दो घण्टे भगवान की पूजा करना उनका नियम है। कालिदास, भारवि, भवभूति, वाल्मीकि और तुलसी की काव्य-रचनाओं का उन्होंने गहन अध्ययन किया है और उनके अध्ययन की उनके मित्रों पर धाक जमी है। वह एक सफल और धार्मिक व्यक्ति हैं। कहानीकार के शब्दों में- "श्री गौरमोहन ज्ञानी अपने जीवन में सफल व्यक्ति कहे जा सकते हैं यदि सफलता शब्द की परिभाषा में सड़ी-गली नैतिकता की दुहाई निकाल दी जाय। जहाँ तक नैतिकता शब्द का प्रश्न है, वह धर्म के साथ जुड़ा है और गौरमोहन ज्ञानी की धर्म पर आस्था पर किसी को शंका नहीं हो सकती। नित्य शाम के समय आफिस से लौटने के बाद वह स्नान करते और गर्मी में रेशमी तथा जाड़ों में ऊनी परिधान पहनकर पूरे दो घंटे विष्णु भगवान के राम और कृष्ण के रूपों की पूजा करते थे। पूजा करने के अर्थ होते हैं - भगवान से अपने पापों को क्षमा कराना लेकिन अगर पाप ही न हों तो भगवान क्षमा क्या करेंगे ? इसलिए सात-आठ बजे के बाद वह पाप-पुण्य का विचार ही छोड़ देते थे।"[1]

सात-आठ बजे के बाद शराब के दौर और उसके बाद किसी स्त्री के सतीत्व से खेलना -यही ज्ञानी जी का रुटीन था। इसी ढर्रे पर उनका जीवन चल रहा था। इस क्रम की पूर्ति वह अपने चपरासी की नवविवाहिता दुर्गा से करना चाहते हैं, किन्तु दुर्गा साक्षात् चण्डी बन जाती है और कुल्हाड़ी से ज्ञानी का काम तमाम कर देना चाहती है। परन्तु ज्ञानी के घिघियाने पर उन्हें छोड़ देती है। दुर्गा के इस रूप और चरित्र को देख ज्ञानी का मन पश्चाताप से भर उठता है और वह अपने जीवन की धारा बदल देने का संकल्प करके सो जाते हैं।

दूसरे दिन उन्हें पता चलता है कि दुर्गा अपने बूढ़े पति को छोड़कर ज्ञानी के दूसरे जवान नौकर जोगेश्वर के साथ भाग गयी है। इतना सुनकर ज्ञानी जी को दिल का दौरा पड़ जाता है। (संभवत: इस विचार से उन्हें शॉक लगता है कि ऐसी सुन्दरी ग्राम-वनिता उनके हाथ से निकल गयी) ज्ञानी जी के घर के वातावरण के द्वारा वर्मा जी ने उच्चवर्गीय जीवन में व्याप्त विकृतियों का जीवंत चित्र प्रस्तुत कर दिया है।

<u>जबरा मारे रोने न दे :-</u> समाज के विभिन्न क्षेत्रों पर व्यंग्य करने के क्रम में इस कहानी में पुलिसवालों का नम्बर आता है। पुलिस वाले जनता के रक्षक और सेवक न बनकर उसके

1- सारिका- दिसम्बर 1974 , पृ० 42

मचाक और [illegible] शोषक बन गये हैं - इसी ओर वर्मा जी का लक्ष्य है।

पत्रकार जयेन्द्र जौहरी कड़ाके की सर्दी से बचने के लिए स्वयं शराब पीते हैं और रामाधार को भी पिला देते हैं और इसके एवज में उनसे सिगरेट लाने की इच्छा व्यक्त करते हैं। सर्दी में सब दुकानें बन्द हैं, इसलिए वे सिपाही एक लकड़ी की गुमटी में रहनेवाले दुकानदार को जगाकर सिगरेट लेना चाहते हैं किन्तु वह दुकानदार भी बड़ा अकड़बाज है। झगड़ा होने लगता है उन लोगों के बीच। इसी समय एक प्रसिद्ध पत्र-संपादक दीनबंधु पाठक उधर से गुजरते हैं और उन लोगों को झगड़ते देख पुलिस कांस्टेबलों को धमकाते हैं कि उनके अफसरों से शिकायत कर देंगे। इस पर पुलिसवाले उन्हें पकड़कर जेल में बंद कर देते हैं।

प्रसिद्ध पत्र के संपादक को जेल में बंद कर देने की चर्चा मुख्यमंत्री तक पहुँचती है और सभी पुलिस अफसरों को डांट पड़ती है किन्तु पुलिसवाले जिससे नाराज हो जायें वह अपनी खैर कब तक मना सकता है। कुछ दिन बाद ही पाठक के वहाँ चोरी हो जाती है। पाठक जी एक हफ्ते तक चोरों के पकड़े जाने तथा माल बरामद होने की प्रतीक्षा करके अपने पत्र में पुलिस की अकर्मण्यता पर एक लेख लिख डालते हैं। पुनः अफसरों की लानत-मलानत का सिलसिला शुरू होता है, परन्तु पुलिस वाले क्या कच्ची गोली खेले होते हैं। एस०एस०पी० चौधरी के द्वारा धमकाने पर बुंदू खाँ एकाएक सूचना देता है कि चोर पकड़ लिए गये और एक लोटा उनसे बरामद हुआ है। पाठक जी लाख कहते हैं कि वह पुराना और घिसा हुआ अलम्यूनियम का लोटा उनका नहीं है (पाठक जी के स्टील के नये बर्तन चोरी हुए थे) किन्तु चौधरी उन्हें शान्त कराते हुए किस्सा खत्म कर देते हैं -"यह लोटा आपका है या नहीं- यह तो छोटी-सी-बात है, चोरी का पता चल गया और चोर गिरफ्तार हो गया, असल बात तो यह है। मुझे अफसोस है कि माल बरामद नहीं हो सका। अब आपको कोई शिकायत नहीं होनी चाहिए।"[1]

इस कहानी में पुलिस वालों की ज्यादतियों का खुलासा तो हुआ ही है, साथ ही सरकारी क्षेत्र में चलनेवाली उठापटक, अपने-अपने कार्य द्वारा दूसरे को गिराने की प्रवृत्ति का भी प्रकारान्तर से प्रकाशन हो गया है।

<u>गुन न हिरानो, गुन गाहक हिरानो है</u> :- इस कहानी में दो भिन्न-भिन्न समय और शासन-व्यवस्था में घटित घटनाओं के माध्यम से वर्तमान शासन-व्यवस्था पर छींटाकशी की गयी है। पहली घटना सन् 1860 ई० के आसपास की है। एक बुद्धिमान और तेजस्वी मराठी

1- सारिका- जनवरी 1975 पृ० 45

युवक सदाशिव सैने ग्वालियर की रियासत के राजा की प्रशंसा सुनकर अपनी रोजी-रोटी कमाने ग्वालियर पहुँचता है, किन्तु अत्यधिक प्रयत्न करने पर भी राजा से भेंट नहीं कर पाता क्योंकि रियासत में आनन्द भेड का अत्यधिक प्रभाव है और वह सदाशिव को राजा से मिलने की व्यवस्था नहीं करता। सदाशिव राजा के सामंतों की निंदा करते हुए राजा को एक पत्र लिखता है कि शासन में ऊपर से नीचे तक पोल ही पोल है और उसे शिकायत-पेटी में डाल देता है। राजा उसका उत्तर देते हैं कि 'तू भी उस पोल में घुस जा।' इसके बाद सदाशिव ग्वालियर रियासत के एक सूबेदार को अपनी चतुरता से हटाकर स्वयं सूबेदार बन जाता है। वह राज्य-कर वगैरह भी नियमित रूप से भेजने लगता है किन्तु राजा को उसके बारे में कुछ पता नहीं चलता। अन्त में अंग्रेज रेजीडेंट से उसकी प्रशंसा सुनकर राजा स्वयं उसे बुलाकर मिलते हैं और सारी कहानी सुनकर उसकी प्रशंसा के रूप में उसका सत्कार करते हैं।

दूसरी कहानी स्वातंत्र्योत्तर शासन व्यवस्था की है। रत्नकुमार एक करोड़पति व्यापारी का पुत्र है - उनकी चारित्रिक विशेषताओं को कहानीकार ने इस प्रकार वर्णित किया है -'वह केवल राजनीतिक हरकतों में ही भाग लेता रहता है। शिक्षा के नाम पर मुश्किल हाई स्कूल फेल, भगवान ने बुद्धि तो दी ही है लेकिन बुद्धि के संचालन से उन्हें कोरा रखा है। लम्बे-से, गोरे-से स्वस्थ नौजवान, प्रभावशाली व्यक्तित्व से युक्त, वह सब तब तक जब तक वह आपसे बात न करे।' ये रत्नकुमार प्रदेश के नये मुख्यमंत्री के आगमन पर उन्हें, किसी तरह रेल-पेल में आगे पहुँचकर प्रभावित कर लेते हैं और उनसे आत्मीयता का सम्बंध जोड़ लेते हैं, किन्तु जब मुख्यमंत्री को पार्टी के मंत्री से रत्नकुमार की वास्तविकता का पता चलती है, तो वह रत्नकुमार से मिलना एकदम बंद कर देते हैं।

पहली वाली कहानी में भी व्यंग्य है, किन्तु दूसरी वाली कहानी का सम्पूर्ण ताना-बाना प्रच्छन्न व्यंग्य से ही बुना गया है। आजकल प्रशासन में योग्य व्यक्ति की अपेक्षा जोर-जबर्दस्ती से घुस आने वालों का प्रभाव है, मंत्री स्वयं अपनी बुद्धि और विवेक से कार्य न करके दूसरों की सलाह पर ही सब निर्णय लेते हैं। कहानीकार पहले ही बता देता है कि रत्नकुमार में बुद्धि के संचालन एवं संतुलन की क्षमता नहीं है -और बात करने के पाँच मिनट के अन्दर ही उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व का भंडाफोड़ हो जाता है, किन्तु मंत्री जी स्वयं इतने पारखी हैं कि एक सप्ताह तक रत्नकुमार की असलियत भाँप नहीं पाते। इन सभी बातों के द्वारा कहानीकार ने वर्तमान शासकों एवं शासन में घुसपैठ करने वालों की बड़ी मीठी चुटकी ली है।

कहानी का अंत इस प्रकार होता है-`डाक्टर श्यामनाथ ने कहा- नहीं, यह मुख्य-मंत्री की नाकाबलियत थी कि उन्होंने रत्नकुमार के गुण की दाद नहीं दी(आज की राजनीति में घुसपैठ करना भी एक गुण है) ।

और डाक्टर जयदयाल शर्मा ने उठते हुए- न किसी की नाकाबलियत, न किसी की बदमाशी । हमारे यहाँ किसी कवि ने कहा है - गुन न हिरानो, गुनगाहक हिरानो है। लेकिन आज के युग में सब गुनी बन गये हैं । गुनगाहक कोई दिखता ही नहीं ।`[1]

कहानी बड़ी व्यंजनापूर्ण है । प्रच्छन्न व्यंग्य में कहानी का सौन्दर्य निखर उठा है । दो कहानियों की तुलना के द्वारा वर्तमान शासन व्यवस्था की दुर्बलता अधिक प्रकाशित हो सकी है ।

<u>मोर्चाबन्दी :-</u> दो भिन्न रुचि और सामाजिक स्तर वाले व्यक्तियों के पारस्परिक मतभेद एवं उसके लिए की गयी पैंतरेबाजी का बड़ा सुन्दर चित्रण इस कहानी में किया गया है ।

लाल संजीवनसिंह एक जमींदार के बेटे हैं और जमींदारी उन्मूलन के पश्चात् अपनी बिगड़ी हालत सुधारने के लिए अपने बड़े-से- बंगले के चारों ओर की जमीन को एक आधुनिक हाउसिंग सोसायटी में परिवर्तित कर देते हैं । उस कॉलोनी में ऊपर से प्रगतिशील लगनेवाले किन्तु अन्दर से धार्मिक आस्था रखनेवाले व्यक्ति रहते हैं । और संजीवन सिंह की धर्म से अधिक आस्था कला(संगीत) में है ।

कालोनी के मुखिया बाबू चिरंजीलाल के पुत्र की मंगनी के अवसर पर सत्यनारायण की कथा का आयोजन होता है । संजीवनसिंह कथावाचक चंद्रिका महाराज की मोटी भद्दी आवाज को तो किसी तरह बर्दाश्त कर लेते हैं, किन्तु कथा के अंत में सामूहिक आरती गायन उनकी सहन-शक्ति सीमा-रेखा के बाहर हो जाता है और वे वहां से भाग खड़े होते हैं ।घर आकर कर्कश ध्वनियों के प्रभाव से मुक्ति पाने के लिए प्रसिद्ध ठुमरी गायिका मेहरुन्निसा के रिकार्ड सुनने लगते हैं । चिरंजीलाल और चंद्रिका महाराज कथा समाप्ति पर जब प्रसाद देने पहुंचते हैं तो असलियत जानकर उन्हें अनुभव होता है कि संजीवनसिंह ने उन लोगों का ही नहीं भगवान का भी अपमान किया है ।

इस अपमान का बदला लेने के लिए वे लोग कॉलोनी के पुराने मंदिर के जीर्णोद्धार की योजना बनाते हैं और उस अवसर पर एक सप्ताह के अखण्ड कीर्तन का भी आयोजन होता है । संजीवन सिंह इस कीर्तन से बौखला उठते हैं । बहुत यत्न करने पर भी जब कीर्तन बंद

1- सारिका- फरवरी 1975, पृ0 45

नहीं होता, तो वह अपने बंगले पर कव्वाली का आयोजन कर देते हैं और इस प्रकार दोनों दलों में युद्ध ठन जाता है - उसकी मोर्चेबन्दी का अत्यंत यथार्थ चित्र वर्मा जी ने खींचा है।

ऐसी मोर्चेबन्दी हमारे लिए नवीन नहीं है, हमारे जीवन में प्राय: ऐसी स्थिति आती है जब कर्कश रिकार्डिंग एवं लाऊडस्पीकर पर किए गए भजन कीर्तन हमारी नींद और सुख चैन हराम कर देते हैं। अपने मत-मताग्रह के प्रदर्शन के लिए एक व्यक्ति दूसरे की सुख-सुविधा को बिल्कुल विस्मृत कर देता है। इस विषय पर कई लेखकों का ध्यान गया है किन्तु वर्मा जी के सूक्ष्म निरीक्षण एवं उसके रोचक चित्रण ने कहानी को अत्यंत आकर्षण बना दिया है।

वर्मा जी की कहानियों का परिचय प्राप्त करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वर्मा जी ने अपनी कहानियों के लिए विषय-वस्तु का चयन अपने आसपास रहने वाले व्यक्तियों की जीवन-कथा से ही किया है। इस बात की सत्यता इसी से सिद्ध हो जाती है कि अपनी अधिकांश कहानियों में लेखक स्वयं किसी-न-किसी रूप में विद्यमान रहा है। समाज और व्यक्ति के जिस संघर्ष को कहानीकार ने प्रतिक्षण देखा और भोगा है, उसकी यथार्थ अभिव्यक्ति उनकी कहानियों में मिलती है। उनकी अधिकांश कहानियाँ 'अर्थ और 'काम' से सम्बंधित हैं। वस्तुत: यह दोनों ही मानव-जीवन से इस प्रकार जुड़े हैं कि इनका अभाव या अतिशय प्रभाव मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन के संतुलन को गड़बड़ा देता है। और इनसे अनेक समस्याओं का प्रादुर्भाव होता है। वर्मा जी ने इन दोनों तत्वों से उत्पन्न अनेक समस्याओं को विभिन्न दृष्टिकोण से देखा है और अपनी कहानियों में उनका चित्रण किया है।

<u>वर्गीकरण :-</u> किसी भी कहानी को किसी वर्ग-विशेष के अन्तर्गत रखना रचनाकार के साथ अन्याय करना है, क्योंकि कोई भी साहित्यकार किसी सीमा में बँधकर रचना करने नहीं बैठता। जीवन के किसी भी अंश से वह प्रभावित होता है, उसे मार्मिक एवं प्रभावशाली ढंग से कहने के लिए वह अनेक उपादानों का प्रयोग करता है, विभिन्न शैलियों का प्रयोग करता है। यों कहानी जैसी छोटी विधा अपने तात्पर्यार्थ से ही इस बात का संकेत कर देती है कि उसे किस वर्ग के अन्तर्गत रखा जाय, अत: उसको वर्गीकृत करना अधिक आवश्यक भी नहीं है। तथापि अध्ययन की सुविधा के लिए यदि हम वर्मा जी की कहानियों पर विचार करें तो वर्मा जी की सभी कहानियों को सामाजिक कहानियाँ कहना ही अधिक उपयुक्त लगता है। क्योंकि वर्मा जी की कहानियों में समाज में व्याप्त विकृतियों, कुरीतियों एवं असंगतियों के रूप में विभिन्न समस्याओं का चित्रण मिलता है। एक विद्वान ने सामाजिक कहानियों के

सम्बंध में लिखा है -'कोई कहानी सामाजिक है, ऐसा कहने से इतना तो निश्चित हो जाता है कि सम्पूर्ण इतिवृत्त का सम्बन्ध उस वस्तुस्थिति से है जो मूलत: व्यापक समाज में फैली है। वह समाज भारतवर्ष का हो सकता है, अमेरिका का अथवा किसी भी देश का हो सकता है। समाज के भीतर व्यक्तिगत जीवन भी आता है और कौटुम्बिक अथवा सामाजिक भी। व्यक्ति और समाज के साथ उसकी संपूर्ण स्यता का से संयोग होने के कारण जितनी भी उपदेश, धर्म तथा संस्कृति से संबद्ध बातें होंगी वे भी इसके अन्तर्गत आ जाएँगी। इस प्रकार सामाजिक कह देने से बड़ी ही व्यापकता का बोध होगा और विशिष्टता-विधायक कोई बात स्पष्ट होगी नहीं। फिर भी व्यापक वर्गीकरण के विचार से इतना संकेत तो मिल ही जाता है कि इस वर्ग की कहानी में समाज के किसी अंग अथवा रूप का उल्लेख मिल सकता है।'[1] इस दृष्टि से वर्मा जी सभी कहानियों (लगभग 50 कहानी) को सामाजिक कहा जा सकता है। एक 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी' ऐसी कहानी है जिसमें ऐतिहासिकता का आभास होता है, क्योंकि उसमें ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम आ गए हैं किन्तु वातावरण आदि की दृष्टि से न कहानीकार ने उसे ऐतिहासिकता प्रदान की है और न उसका उद्देश्य ही यह है। कहानी का मुख्य उद्देश्य पतनोन्मुख मुगल साम्राज्य के शासकों की लापरवाही एवं अनुशासन पर व्यंग्य करना है। कहानी व्यंग्य-शैली में लिखी गयी है और इसमें रबर का तम्बू अंग्रेजों की विस्तारवादी नीति का प्रतीक है।

यदि वर्मा जी की कहानियों को शैली की दृष्टि से विभाजित करें तो हम देखेंगे कि छह आने का टिकट', 'इन्स्टालमेण्ट', 'विवशता', 'रेल में', 'परिचयहीन यात्री', 'उत्तरदायित्व', 'अर्थ-पिशाच', 'कुँवर साहब का कुत्ता', 'कुँवर साहब मर गये', 'काश कि मैं कह सकता', 'नाजिर मुंशी', और 'राख और चिनगारी' कहानियाँ आत्मकथात्मक अथवा प्रथम पुरुष शैली में लिखी गयी हैं। इसके अतिरिक्त 'प्रेजेण्ट्स', 'कायरता', 'बेकारी का अभिशाप', 'एक अनुभव', 'विक्टोरिया क्रास', 'रहस्य और रहस्योद्घाटन' कहानियों को भी आत्मकथात्मक शैली की कहानियाँ कहना उपयुक्त होगा क्योंकि इसमें कहानी की भूमिका बाँधने का कार्य कभी अन्य पुरुष शैली में और कभी प्रथम पुरुष शैली में हुआ है, तत्पश्चात् मुख्य कहानी होटल, रेस्त्राँ या रेल आदि में बैठे किसी एक व्यक्ति के द्वारा आत्मकथात्मक शैली में प्रस्तुत की गयी है। 'सारिका' की 'वसीयत', 'समझौता', 'गनेसीलाल का साम्राज्य' कहानियाँ भी आत्मकथात्मक शैली की हैं। 'पराजय और मृत्यु' में प्रारम्भ की भूमिका

1- कहानी का रचना विधान- डा० जगन्नाथप्रसाद शर्मा, पृ० 16।

आत्मकथात्मक शैली में है। `[illegible] और उसके बाद मूल कहानी पत्र शैली में है, इसी प्रकार `पटा-बनेठी` प्रथम-पुरुष शैली में ही है और बीच में पत्र शैली का प्रयोग हुआ है। शेष सभी कहानियाँ वर्णनात्मक शैली में लिखी गई हैं।

विषय की प्रधानता की दृष्टि से वर्मा जी की कहानियों का वर्गीकरण करना दुष्कर कार्य है क्योंकि उसमें समस्या, व्यंग्य और चरित्र बिल्कुल घुलमिलकर चलते हैं। किन्तु `प्रायश्चित`, `दो बाँके`, `मुगलों ने सल्तनत बख्श दी`, `तिजारत का नया तरीका`, `लाला तिकड़मीलाल`, `अनशन`, `छह आने का टिकट`, `विक्टोरिया क्रॉस`, `इन्स्टालमेण्ट`, `कुँवर साहब का कुत्ता`, `कुँवर साहब मर गये`, `रेल में` तथा `सारिका में छपी सभी कहानियाँ हास्य-व्यंग्य प्रधान हैं।

वर्मा जी की कहानियों के वस्तुगत परिचय और वर्गीकरण के पश्चात् अगले पृष्ठों में उनकी कहानियों के शिल्पगत वैशिष्ट्य की चर्चा की जाएगी।

0000000
00000
000
0

<u>वर्मा जी की कहानियों का कथा-संगठन :-</u> कहानी और उपन्यास के गठन में पर्याप्त अन्तर होता है। उपन्यास में 'एक प्रमुख कथानक के साथ कई अवान्तर कथाएँ भी लिपटी चलती हैं। इसका चित्र फलक व्यापक होता है जिसमें कथानक का उत्थान-पतन बारी-बारी से होता रहता है। पर कहानी विस्तार से सदा बचना चाहती है। कहानी-लेखन को अर्जुन की भाँति लक्ष्य पक्षी के केवल सिर पर दृष्टि टिकानी होती है अन्यथा निशाना चूक जाने की अधिक सम्भावना रहती है।'[1] इसके साथ-साथ जीवन की पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए उपन्यासकार छोटी-छोटी अनेक घटनाओं एवं परिस्थितियों का विस्तृत चित्रण करता है, जबकि कहानीकार बहुत तेजी से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता है और अनावश्यक विस्तार के मोह में नहीं फँसता। इस कसौटी पर वर्मा जी की कुछ कहानियाँ पूर्णरूपेण खरी नहीं उतरतीं। यों वर्मा जी की कहानियाँ आकार में बड़ी नहीं हैं, किन्तु उनकी सभी कहानियों में किसी-न-किसी प्रकार की भूमिका बाँधने की प्रवृत्ति मिलती है। कुछ कहानियों में ये भूमिकाएँ सार्थक और आकर्षक हैं, किन्तु कहीं-कहीं इनसे कहानियों का आरम्भ प्रभावहीन एवं नीरस हो गया है।

कुछ कहानियों में वर्मा जी कहानी का प्रारम्भ एक दार्शनिक टिप्पणी से करते हैं और उससे कहानी का सम्बन्ध जोड़ने का ब यत्न करते हैं। 'पराजय और मृत्यु', 'एक विचित्र चक्कर' और 'काश कि मैं कह सकता' कहानियों का प्रारम्भ ऐसी ही दार्शनिक टिप्पणियों से क हुआ है। 'पराजय और मृत्यु' का प्रारम्भ द्रष्टव्य है - 'आप लोगों में कितने अपने जीवन का लक्ष्य जान सके हैं? मेरा आपसे यह प्रश्न है; पर इस प्रश्न के पहले एक प्रश्न और उठता है -- क्या जीवन का कोई लक्ष्य भी है?

मैं जानता हूँ कि आप इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं दे सकते; इन प्रश्नों का उत्तर आज तक किसी ने दिया भी नहीं। यह बात नहीं कि इन प्रश्नों पर किसी ने विचार न किया हो; यह बात भी नहीं कि किसी ने इन प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयत्न न किया हो। अनादि-काल से मनुष्य प्रकृत तथा जीवन के गूढ़ रहस्यों को समझने में व्यस्त रहा है; फिर भी इन प्रश्नों का उत्तर नहीं मिल सका। धारा में बहते हुए धारा की गति को देखना और समझना अथवा धारा का विश्लेषण करना असम्भव है; जीवित रहकर जीवन को समझना भी असम्भव है। जीवन को समझने के लिए हमें जीवन से पृथक होकर उसे देखना पड़ेगा, और जीवन से पृथक् होना ही अस्तित्व का विनाश है - मृत्यु है।'[2] मृत्यु की इस पीठिका को तैयार कर लेने पर कहानीकार ने उसका सम्बंध भुवनेश्वरी

1- हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद-डा० त्रिभुवनसिंह, पृ० 94
2- मेरी कहानियाँ-पृ० 182

देवी की मृत्यु(आत्महत्या) से जोड़ा है। यों इस टिप्पणी का सम्बन्ध हम भुवनेश्वरी देवी के जीवन से जोड़ना चाहें, तो सम्भवत: सफलता भी मिल जाय, किन्तु इस नीरस टिप्पणी से कहानी के सौन्दर्य को ठेस पहुँची है। यदि कहानी सीधे 'भुवनेश्वरी देवी, एम० ए० ने आत्महत्या कर ली- लोगों ने यह खबर सुनी और उन्हें आश्चर्य हुआ।' से प्रारम्भ होती तो कहानी की मुख्य वस्तु को तनिक भी क्षति नहीं पहुँचती।

इसी प्रकार कहानी कहने-सुनने के लिए उपयुक्त वातावरण बनाने के लिए भी वर्मा जी ने बड़ी लम्बी चौड़ी भूमिकाएँ बाँधी हैं। 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी' में कथा-वक्ता हीरोजी का परिचय अत्यधिक लम्बा हो गया है। (यह परिचय दो पृष्ठों में दिया गया है) यह परिचय नीरस तो नहीं है किन्तु कहानी की एकान्विति में इससे बाधा अवश्य उत्पन्न हुई है। 'विक्टोरिया क्रॉस' में तो होटल का वातावरण, होटल जाने का कारण, विक्टोरिया क्रॉस देखकर सैनिक का सम्मान करना और अंत में सुखराम के मित्र से विक्टोरिया क्रॉस व प्राप्ति की कथा सुनने तक की कई सीढ़ियाँ हैं, जिनके आरोहण के उपरान्त मुख्य कथा की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार 'रहस्य और रहस्योद्घाटन', में तांत्रिकों और भविष्य वक्ताओं के किस्से सुनाने के लिए 'आफिसर्स क्लब' और 'एक अनुभव' में होटल का वातावरण उपस्थित करने में कहानी का बड़ा अंश निकल जाता है। 'दो रातें, 'रेल में' और 'परिचयहीन यात्री' में रेल का वातावरण तथा 'बेकारी का अभिशाप' में जेल का वातावरण प्रस्तुत करने में कहानीकार ने अनावश्यक विस्तार किया है। इन भूमिकाओं का महत्व पृष्ठभूमि के रूप में भले ही हो किन्तु मुख्य कहानी की रोचकता एवं प्रभावान्विति में इनसे विशेष अभिवृद्धि नहीं हुई है।

उपर्युक्त कहानियों के विपरीत 'मेज की तस्वीर' और 'नाजिर मुंशी की दार्शनिक टिप्पणियाँ अपेक्षाकृत छोटी और सार्थक हैं। 'मेज की तस्वीर' का रामनारायण(लेखक) कुछ लिखता है -'जीवन एक पहेली है और मृत्यु उस पहेली का उत्तर है।'[1] इतना लिखते ही उसकी दृष्टि सामने मेज पर रखी तस्वीर पर जाती है और उसका चिन्तन अपनी प्रेमिका, पारिवारिक जीवन और अपनी आर्थिक विवशता की ओर मुड़ जाता है। अंतत: वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि मृत्यु भी उस पहेली को नहीं सुलझा सकती। 'तिजारत का नया तरीका', 'लाला तिकड़मीलाल', 'अनशन', 'छह आने का टिकट' और

1- मेरी कहानियाँ- पृ० 133

'खिलावन का नरक', 'पियारी', 'कायरता', 'बाहर-भीतर', 'बतंगड़' और 'राख और
[illegible]
चिनगारी' के प्रमरम्भ अत्यंत सुन्दर बन पड़े हैं। इनमें कहानीकार बिना किसी भूमिका या पृष्ठभूमि के सीधे अपने कथ्य पर आ जाता है। इन कहानियों का प्रारम्भ या तो किसी घटना से हुआ है, या किसी प्रमुख पात्र के परिचय से अथवा प्रमुख पात्र के क्रिया-कलाप और कथोपकथन से हुआ है। 'तिजारत का नया तरीका' का प्रारम्भ इस प्रकार हुआ है-'मुंशी उल्फतराय के शराब के नशे में तिमंजले से उड़ने की कोशिश करने पर वहाँ से गिरकर मर जाने की सूचना तार द्वारा जिस समय उनके एकमात्र सुपुत्र तथा उत्तराधिकारी मुंशी खुशबख्तराय उर्फ मिस्टर के० राय के पास आई उस समय वे एक एंग्लो-इण्डियन गर्ल के कारण एक टामी से पिटने के बाद अस्पताल से मरहम-पट्टी करवाकर अपने कमरे में दर्द से कराह रहे थे।'[1] इन खुशबख्तराय की ऐसी प्रशंसा सु पढ़कर पाठक के मन में कुतूहल जाग्रत हो जाता है कि ऐसे मनचले युवक के और तौर-तरीके क्या होंगे? उसकी क्या-क्या विशेषताएँ होंगी इन प्रश्नों का उत्तर कहानीकार ने सम्पूर्ण कहानी में दिया है पाठक की कुतूहल वृत्ति को उद्दीप्त करके शांत करते हुए। 'खिलावन का नरक' कहानी का [illegible] प्रारम्भ भी रेल के दृश्य से होता है, किन्तु उसमें खिलावन की स्थिति का सुन्दर अंकन वर्मा जी ने किया है।

वर्मा जी की परवर्ती कहानियों (सारिका में प्रकाशित कहानियाँ) में भूमिका की प्रवृत्ति काफी कम हो गयी है। 'समझौता' शीर्षक कहानी का प्रारम्भ दार्शनिक टिप्पणी से हुआ है-'चीज़ें क्यों हो जाती हैं, कैसे हो जाती हैं और उनके हो जाने में क्या कहीं कोई विधान भी है? अनादिकाल से ये प्रश्न दुनिया के सामने रहे हैं और अनान्तकाल तक ये प्रश्न दुनिया के सामने रहेंगे।'[2] वर्मा जी की पूर्ववर्ती कहानियों की अपेक्षा यह टिप्पणी छोटी है और कहानी की आधारभूत घटना से इसका घनिष्ठ सम्बंध है। जयकृष्ण द्वारा स्टेनो को दिया जानेवाला साड़ी का डिब्बा रेस्त्राँ में भूल जाना और उस डिब्बे में रखे पत्र से रहस्य का उसकी पत्नी पर खुल जाना-ऐसी घटना है, जो अप्रत्याशित रूप से घटित हो जाती है और पति-पत्नी के जीवन को झकझोर कर रख देती है। ये घटना क्यों घटी? इस प्रश्न को कलात्मकता से प्रारम्भ में प्रस्तुत कर दिया गया है। 'गुन न हिरानो, गुन गाहक हिरानो है' शीर्षक कहानी में भी 'रहस्य और रहस्योदघाटन' आदि कहानियों की भाँति एक सम्मान-भोज के रूप में कहानी कहने-

---

1- मेरी कहानियाँ- पृ० 29

2- सारिका-अक्टूबर 1974 -पृ० 40

सुनने का वातावरण उत्पन्न किया गया है, किन्तु यह अधिक विस्तृत एवं असंतुलित नहीं है। इसी प्रकार 'मोर्चाबन्दी' की युद्धस्थली तथा उसमें भाग लेनेवाले व्यक्तियों का परिचय कुछ विस्तृत तो है, किन्तु कहानी की मुख्य धारा से जुड़ा होने के कारण उचित ही नहीं, पृष्ठभूमि के रूप में आवश्यक भी है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है वर्मा जी कहानी का आरम्भ भूमिका या पृष्ठभूमि के द्वारा करते हैं, तदुपरान्त वे कहानी में एकदम तीव्र गति भर देते हैं। भूमिका एवं पृष्ठभूमि में कहानी की मूल संवेदना एवं प्रयोजन का संकेत वर्मा जी किसी-न-किसी रूप में अवश्य कर देते हैं। कहानी के लिए उपर्युक्त वातावरण या अवसर उपस्थित होते ही कथा का विकास तीव्र गति से होता है और वह अपने लक्ष्य की ओर तीर की भाँति बढ़ चलती है। कहानी के उत्तर मध्य भाग को रोचक, कुतूहलपूर्ण एवं मर्मस्पर्शी बनाने के लिए वर्मा जी आकस्मिक घटनाओं एवं संयोगों की अवतारणा करते हैं। पूर्व मध्य भाग में पात्रों के वाद-विवाद एवं कार्य-कलाप के द्वारा कथा का विकास होता है और तभी अचानक ऐसी स्थिति आ जाती है या ऐसी घटना घटित होती है कि कहानी एक नया मोड़ लेकर समाप्त हो जाती है। 'एक अनुभव', 'खिलावन का नरक', 'दो रातें', 'संकट', 'क्षमायाचना' और 'समझौता' के उत्तर भाग में ऐसी ही आकस्मिक घटनाओं का उपयोग हुआ है।

कभी-कभी वर्मा जी की कहानियों में पात्रों के अन्तर्बाह्य द्वन्द्वों के द्वारा भी कहानी को विकसित किया गया है। 'राख और चिनगारी' में नायिका गीता के अन्तर्द्वन्द्व के बीच घटनाओं को इतने अच्छे ढंग से पिरोया गया है कि कथा में एक क्रम न होते हुए भी कथाक्रम की विशृंखलता का आभास नहीं होता। यौवन की उमंग और अभिलाषा रखनेवाली गीता पर उसके भाई की मृत्यु की घटना से तुषारपात होता है और वह कर्तव्य का पालन करते हुए भी एक जलन और संघर्ष का अनुभव करती है। ऐसी असामान्य मानसिक स्थिति में उसकी भेंट नायक रमेश से होती है, किन्तु उसकी द्वन्द्वात्मक स्थिति समाप्त नहीं होती। इससे उबरकर वह रमेश से विवाह करने का निश्चय करती है, परन्तु विवाह की सूचना पाकर आये हुए निकट सम्बंधियों द्वारा खुशियाँ मनाये जाने की घटना से उसका अन्तरतम पुनः आंदोलित हो उठता है और तब उसके अप्रत्याशित निर्णय से कहानी में नया मोड़ उपस्थित होता है और साथ ही कहानी का अंत हो जाता है। 'पराजय या मृत्यु' कहानी का विकास भी इसी प्रकार हुआ है। 'उन्माद'

कहानी का विकास भी निश्चय-अनिश्चय के द्वन्द्व से हुआ है। `उत्तरदायित्व` कहानी का मध्य भाग शीला की आत्म-विज्ञप्ति से निर्मित हुआ है।

`पियारी`, `कायरता`, `विवशता`, `रेल में`, `बेकारी का अभिशाप`, `अर्थ-पिशाच`, `बाहर-भीतर`, `बतंगड़` और `काश कि मैं कह सकता` आदि समस्या प्रधान कहानियों के मध्य में पात्रों के वाद-विवाद, वार्तालाप और उनके कार्य-कलाप के द्वारा मुख्य समस्या का विस्तार हुआ है। इसके द्वारा मुख्य समस्या के अनेक पहलू प्रकाशित हुए हैं। `लाला तिकड़मीलाल`, `अनशन`, `तिजारत का नया तरीका`, छह आने का टिकट`, `कुँवर साहब का कुत्ता`, `कुँवर साहब मर गए`, `आवारे`, `रंगीलेलाल तीर्थयात्री` और `गनेसीलाल का रामराज` आदि कहानियों में कहानियों का उत्तरार्द्ध (मध्य और अंत) पात्रों के अजीबोगरीब एवं हास्यात्मक कारनामों, रंग-ढंग तथा तौर-तरीकों के वर्णन से रचा गया है। इन कहानियों में `प्रभावान्विति की सिद्धावस्था की विवृति` ही कहानीकार का लक्ष्य है। इसी विवृति तथा प्रसार में ही रचना का अंत हो जाता है। उपर्युक्त कहानियों के पात्रों के चित्र-विचित्र क्रिया-कलापों से समाज के विभिन्न वर्ग के लोगों का चरित्र उद्घाटित करना ही कहानीकार का अभीष्ट है।

वर्मा जी की कहानी के क्रमिक विकास और अंत की दृष्टि से दो ह कहानियाँ विशेष उल्लेख्य हैं। `दो बाँके` में दोनों बाँकों और उनके शागिर्दों के पारस्परिक वार्तालाप से ही कथानक का विकास हुआ है और अंत देहाती की टिप्पणी से हुआ है। देहाती की टिप्पणी से कहानी की मूल संवेदना व्यक्त हो गयी है। `मोर्चाबन्दी` में लाल संजीवनसिंह और चंद्रिका महाराज की पार्टियों के कार्य-व्यापारों एवं वाद-विवाद से अंत तक संघर्ष की स्थिति बनी ही रहती है। कहानी का अंत द्रष्टव्य है -`लेकिन शाम के समय जब कीर्तन बाकायदा चल रहा था, लाल साहब के यहाँ कव्वाली का कार्यक्रम आरंभ हो गया। हुआ यह कि दिन में लाल साहब एक दर्जन ग्रामोफोन रेकार्ड खरीद लाये और उन्होंने अपने इलाके से रामसिंह के छोटे भाई श्यामसिंह रावत को बुलवाकर लगातार रिकार्ड बजाने की ड्यूटी पर लगा लिया।

लाल साहब रिवाल्वर लेकर बैठ गये, और लाउडस्पीकर तेजकर दिया गया।`

कहानी के इस अंत के पश्चात् कहानीकार के `नोट` ने कहानी के अंत को अधिक प्रभावशाली बना दिया है -`नोट - कल से लगातार तार आ रहे हैं कि कहानी भेजो, तो आज तक की कहानी इतनी ही है - आगे क्या होगा, कहा नहीं जा सकता।

इतना तै है कि दंगा नहीं होगा - यह मोर्चाबन्दी भी कुछ दिनों की है । सुलह हो ही जायेगी । लेकिन चंद्रिका महाराज पर जो मुकदमा दायर कर दिया गया है, वह बरसों चलेगा ।`

`दो बाँके` की तरह `प्रायश्चित` और `दिल का दौरा` में क्रमश: बिल्ली के भाग जाने और दुर्गा के भाग जाने से कहानी में अनोखा आकर्षण उत्पन्न हो गया है और इन घटनाओं से कहानी का अंत अत्यंत प्रभावशाली हो गया है । इसी प्रकार `दो रातें` का अंत भी विस्मयकारी घटना से हुआ है । वर्मा जी की कुछ कहानियों का अंत पात्रों के पूरे-अधूरे वाक्यों से हुआ है, जिससे कहानी के पात्रों की मानसिक स्थिति का स्थायी प्रभाव पाठक पर पड़े बिना नहीं रहता ।`इन्स्टालमेण्ट`, `प्यारी`, `बेकारी का अभिशाप`, `उत्तरदायित्व`, `बाहर-भीतर`, `कुँवर साहब मर गए`, `बॉय एक पेग और` तथा `उन्माद` कहानियाँ ऐसी ही हैं ।`मेज की तस्वीर`, `पराजय अथवा मृत्यु`, `काश कि मैं कह सकता` और `राख और चिनगारी` आदि कहानियों के अंत पात्रों के आत्मकथन द्वारा हुए हैं, जिनसे पात्रों की हार्दिक पीड़ा व्यक्त हुई है । इनके अतिरिक्त कुछ कहानियों के अंत कथावाचक (लेखक) के निष्कर्ष के रूप में भी दृष्टिगत होते हैं । इनमें `तिजारत का नया तरीका`, `लाला तिकड़मीलाल`, `अनशन`, `छह आने का टिकट`, `एक अनुभव`, `खिलावन का नरक`, `अतंगड़`, `रंगीलेलाल तीर्थयात्री`, `वसीयत`, `क्षमायाचना` और `संकट` आदि कहानियाँ प्रमुख हैं । इस प्रसंग में एक तथ्य की ओर लक्ष्य किया जा सकता है कि इनमें से अधिकांश कहानियों के कथावाचक कहानी के पात्र भी हैं, अत: यह अंत-प्रकाशक टिप्पणी आरोपित नहीं लगती ।

वर्मा जी की कुछ कहानियाँ दोहरे कथानक वाली भी हैं, इनमें `रहस्य और रहस्योद्घाटन`, `दो पहलू` और `गुन न हिरानो गुन गाहक हिरानो है` विशिष्ट हैं। इनमें कहानी के प्रमुख पात्र अथवा लेखक के वक्तव्य एवं निष्कर्ष के द्वारा कहानी के दो - सूत्रों को जोड़ा गया है । किन्तु वर्मा जी की बहुत-सी कहानियाँ ऐसी हैं जिनमें गौण पात्रों के पारिवारिक परिचय के रूप में छोटी-छोटी कहानियाँ एवं विवरणों का समावेश हो गया है । ये कहानियाँ एवं विवरण कभी-कभी लम्बे तथा अनावश्यक भी लगते हैं, किन्तु वर्मा जी की `कहानी कहने की कला` की विशेषता है कि उनमें नीरसता एवं अस्वाभाविकता नहीं आई है ।`अनशन` में मिस्टर फटपटप्रसाद की ससुराल -कथा तथा `रहस्य और रहस्योदघाटन` में ज्ञानगुप्त गौतम की जीवन कथा को समाविष्ट करने का

उद्देश्य बहुत संक्षिप्त है, किन्तु उन्हें काफी लम्बा स्थान कहानी में मिल गया है । इसी प्रकार `क्षमायाचना`, और `रंगीलेलालतीर्थयात्री` में रविप्रकाश तथा अविनाशचन्द्र के पुत्र-पुत्रियों का परिचय एवं `संकट` में कवि अभिशप्त का जीवन परिचय आवश्यकता से अधिक विस्तार पा गये हैं । किन्तु कहानीकार ने उन्हें मुख्य कहानी में ऐसी जगह और ऐसे प्रस्तुत किया है कि उससे कहानी की रोचकता में बाधा नहीं आती एवं कहानी की एकोन्मुखता भंग नहीं होती । वर्मा जी की कहानियों का मुख्य उद्देश्य समाज या समाज में अवस्थित व्यक्ति की विभिन्न समस्याओं, कुंठाओं एवं विकृतियों का यथार्थ चित्रण करना या उन पर व्यंग्य-प्रहार करना है । इसीलिए उनकी कहानियाँ घूम-फिर कर अपने मुख्य विषय की ओर बढ़ती जाती है और अंतत: उसका समष्टि प्रभाव या प्रभावान्विति निर्लक्ष्य नहीं होती । एक उद्धरण से इस बात को समझ सकते हैं । `पटा-बनैठी` कहानी का प्रारम्भ पति-पत्नी की लड़ाई से होता है, अत: पत्नी कुपित होकर कमरे का दरवाजा बन्द कर लेती हैं । पति होटल एवं पिक्चर जाने का प्रोग्राम बनाते हैं, किन्तु पैसे पत्नी के पास हैं । तभी त्रिवेणी लाल जो महिला विधाय के सैक्रेटरी हैं, चंदे के लिए पैसा लेने आ जाते हैं । नेताओं और समाज सुधारकों एवं पति-पत्नी सम्बंधों पर व्यंग्य करती हुई कहानी महिला विद्यालय की चर्चा तक बढ़ती है - इसी महिला विद्यालय में कहानी की नायिका पढ़ती है । दूसरे परिच्छेद में रमेश (मैं-कथावक्ता) के मित्र का पुत्र(कहानी के का नायक) आता है और इन दोनों का साक्षात्कार महिला कालेज में होता है और नायिका (महामाया) की पटा-बनैठी की कला तथा मर्दानगी नायक को इतना निरुत्साहित करती है कि वह अपने भावी ससुर से विवाह की अनिच्छा व्यक्त करते हुए पत्र लिखता है और पटा -बनैठी दक्ष युवती से मुक्ति पाता है । स्पष्ट है कि कहानी कई मोड़ों से होते हुए अपने लक्ष्य की ओर बढ़ती है और विभिन्न मोड़ों से उत्पन्न विभिन्न प्रभाव मिलकर अंतत: एक प्रभावान्विति का धोतन करते हैं कि हमारे समाज की दो पीढ़ियों के विचारों में विशेष अंतर नहीं आया है । रमेश ने अपनी पत्नी के तर्कों का उत्तर अपने हाथों से दिया था और रमेश के मित्र का पुत्र अपनी भावी पत्नी के सबलात्व को सहन नहीं कर सका था । अर्थात् पुरुष नारी को दबाए ही रखना चाहता है, वह स्त्री को पुरुष पर प्रभुत्व जमाते नहीं देख सकता । इसी प्रकार वर्मा जी की सभी छोटी-बड़ी (दो-तीन कथानक वाली कहानियाँ भी) सभी कहानियाँ प्रभावान्विति की दृष्टि से स्पष्ट एवं सफल रही हैं ।

कहानी का मुख्य तत्व कुतूहल है । यह किसी-न-किसी रूप में कहानी में विद्यमान रहता है । सुनायी जानेवाली कहानी और लिखित कहानी दोनों में ही इसका

पर्याप्त महत्व है ।`कहानी अपने कहे जानेवाले रूप में कुतूहल पर अधिक आश्रित रहती है और इसी के बल पर ही कहानी सुनानेवाले सुनाते-सुनाते बीच में रुककर श्रोताओं से पैसा ले लेते थे और श्रोतागण कुतूहल-वश पैसा देकर भी अधूरी कहानी को पूरी सुनते थे । यह अनुष्य के भीतर जाग्रत कुतूहल की ही माया है । आजकल लिखित कहानी के भीतर कुतूहल ने दूसरा रूप धारण किया है । अब यह केवल घटना का ही कुतूहल नहीं रह गया वरन् चरित्र और मनोवैज्ञानिक तथ्य की जिज्ञासा के रूप में परिणत हो गया है[1]। कुतूहल वर्मा जी की कहानियों का प्राण है और उसके द्वारा वर्मा जी की कहानियों में विशेष आकर्षण उत्पन्न हो गया है । अपनी कहानियों में पाठक की जिज्ञासा बनाए रखने के लिए उन्होंने अप्रत्याशित घटनाओं और चरित्रों के आकस्मिक आचरण का प्रयोग बराबर किया है और कभी-कभी घटनाओं का क्रम परिवर्तित करके भी कुतूहल -सृष्टि की है ।

घटनाओं के द्वारा कुतूहल उत्पन्न करने की दृष्टि से वर्मा जी की `प्रायश्चित` कहानी सर्वाधिक सफल रही है । इसमें रामू की बहू की बाल-सुलभ सुलभ चंचल वृत्ति के चित्रण के साथ कबरी बिल्ली की चालाकियों का वर्णन करके तो कहानीकार पाठक की वृत्ति रमाए रखता है, साथ ही कबरी को पाटे से मारने की घटना से कहानी में आशातीत तीव्रता आ जाती है और पाठक आगे की कहानी जानने के लिए अत्यधिक उत्सुक हो उठता है । इसी प्रकार कहानी का अंत भी विस्मयकारी एवं कुतूहलपूर्ण है ।`लाला तिकड़मीलाल` में कंजूस तिकड़मीलाल के पाँच सौ रुपये का पुरस्कार देने के निर्णय और `कुँवर साहब मर गए` में भोगी विलासी कुँवर साहब के `भारत माता की जय` बोलकर गिरफ्तार होने के अप्रत्याशित आचरणों से कहानी में कुतूहल की सृष्टि की गयी है । इसी प्रकार `विवशता` में नायिका द्वारा रुपये चुराने का कार्य उसके स्वभाव के विपरीत है, किन्तु एक बार आगे की कहानी के लिए कुतूहल उत्पन्न करके कहानीकार पात्रों की अंत:प्रेरणाओं का स्पष्टीकरण करके उनके आचरण की संगति एवं औचित्य प्रमाणित कर देता है ।

कहीं-कहीं तो वर्मा जी ने कुतूहल-सृष्टि के परम्परागत उपायों को ही अपनाया है ।`विक्टोरिया क्रॉस` में जब कथावाचक (मैं) यह जानना चाहता है कि सुखराम को वीरता के किस कार्य के लिए विक्टोरिया क्रॉस मिला था ? तो सुखराम का साथी कहता

1- काव्यशास्त्र-डा० भगीरथ मिश्र- पृ० 99-100

है कि 'बाबू साहब ! सुखराम नहीं चाहते कि मैं कुछ बताऊँ, अब आप ही सपष्ट समझिए, मैं किस प्रकार बतला सकता हूँ ?' सुखराम के साथी का यह कथन अपार कुतूहलवर्द्धक है, किन्तु ठीक उसी प्रकार का प्रभाव डालता है जैसा कि पुराने कहानी सुनाने वालों द्वारा बीच में कथा रोक लोगों की जिज्ञासा उत्पन्न करने पर पड़ता है होगा । इसी प्रकार 'तिजारत का नया तरीका' में जब खुशबख्तराय को व्यापार के एक तरीके में घाटा होता है, तो वह पुन: कोई छोटा-मोटा काम आरम्भ करने का निर्णय करते हैं ; किन्तु वह काम क्या होगा- इस सम्बंध में पाठक की जिज्ञासा जगाने के लिए कहानीकार (खुशबख्तराय का मित्र) लिखता है -'फिर यह सोचा गया कि खुशबख्तराय अब कौन काम करें, किसी निर्णय पर हम नहीं पहुँच सके ।'[1] तत्काल खुशबख्तराय को तरीका सूझता है और कहानी का नया मोड़ प्रारम्भ हो जाता है । इसके बाद पाठक पुन: सचेत होकर खुशबख्तराय के नये तरीके के बारे में जानने के लिए उत्सुक हो ब उठता है । सम्पूर्ण कहानी में कुतूहल बढ़ाने के विविध उपाय प्रयुक्त हुए हैं ।

'वसीयत' कहानी की योजना ही इस ढंग से की गयी है कि कुतूहल बराबर बना ही रहता है । चूड़ामणि मरते समय अपनी वसीयत सुनाने का कार्य अपने शिष्य और सहयोगी के ऊपर छोड़ जाते हैं और निर्देश कर देते हैं कि उनकी मृत्यु होते ही वह वसीयत लागू हो जायेगी और तेरहीं तक के विभिन्न अवसरों पर सुनायी जायेगी । इसलि इसी समय से कहानी के पात्रों के साथ-साथ पाठक की दृष्टि भी वसीयत पर टिक जाती है । और वसीयत का एक-एक अंश सुनने के बाद कुतूहल बढ़ता ही जाता है । वह वसीयत का अंत होने तक कुतूहल चरम सीमा पर पहुँच जाता है और इसके बाद कहानी समाप्त हो जाती है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्मा जी ने कुतूहल-सृष्टि के विभिन्न उपायों का प्रयोग किया है । उनकी कुछ कहानियाँ ऐसी भी हैं, जिनमें कहानी की कुतूहल और आश्चर्य-वृत्ति एक बार शांत होने पर अपनी कथा-कथन शैली के कारण अपना अमिट प्रभाव तो छोड़ जाती है किन्तु दुबारा पढ़ने का आग्रह नहीं करती । कुछ ऐसी कहानियाँ भी हैं जो अपनी शाश्वत समस्याओं के कलात्मक चित्रण के साथ-साथ कुतूहल वृत्ति बनाए रखती हैं । ऐसी कहानियाँ मानव-संघर्ष, अन्तर्द्वन्द्व की यथार्थ अभिव्यक्ति और अनुभूति की सच्ची गहराई के साथ कुतूहल बनाए रखकर पाठक को बार-बार कहानी पढ़ने के लिए आकर्षित करती हैं । इस दृष्टि से 'कायरता', 'एक अनुभव', 'काश कि मैं कह सकता', 'दो रातें',

---

1- मेरी कहानियाँ - पृ० 33

'पराजय अथवा मृत्यु' राख और चिनगारी', 'उन्माद', 'क्षमायाचना' और 'मोर्चाबन्दी' आदि कहानियाँ विशेष स्मरणीय हैं।

<u>वर्मा जी की कहानियों में पात्र एवं चरित्र-चित्रण :-</u> कहानी के लघु आकार में न बहुत-से पात्रों का समावेश हो सकता है और न ही उनके चरित्र के क्रमिक विकास का चित्रण संभव है। कहानी में तो पात्रों के जीवन के किसी एक अंश की अभिव्यक्ति हो सकती है और उसके द्वारा कहानीकार पात्र की एकाधिक विशेषताओं का अंकन कर पाता है। एक आलोचक ने उचित ही लिखा है -'उपन्यास में एक चरित्र को प्रचलित करने के लिए कितने ही धूमिल चरित्रों को इकट्ठा किया जा सकता है। विवेच्य चरित्र की भी प्रारम्भ में कमजोरियाँ दिखाकर अन्त में उसकी महानता दिखाई जा सकती है, या महान चरित्र को पतन के गर्त में गिराने का अवसर होता है। पर कहानी में न तो चरित्रों की भीड़ ही आ सकती है और न चरित्र के विभिन्न पहलुओं का अंकन ही संभव है। वहाँ तो जहाँ चरित्र की एकात्मकता में विभिन्नता दिखाई दी कि फिर उसकी उज्ज्वलता पर ठेस आए बिना न रहेगी।'[1]

वर्मा जी ने अपनी कहानियों में घटनाओं के साथ-साथ चरित्रों को भी पर्याप्त महत्व दिया है। कुछ कहानियों में तो कुछ विशिष्ट चरित्रों के क्रिया-कलापों का चित्रण इस प्रकार किया गया है कि वे रेखाचित्र के निकट पहुँच गयी हैं। कुछ कहानियाँ ऐसी भी हैं जिनमें पात्रों को समस्याओं के प्रस्तुतीकरण एवं घटनाओं के संचालन के निमित्त ही ~~स्थान~~ स्थान दिया गया है, किन्तु कुछ ऐसी भी कहानियाँ हैं जिनमें पात्रों के व्यक्तित्व, भाव एवं अन्तर्द्वन्द्व को गहन अनुभूति का स्पर्श मिला है। वर्मा जी की कहानियों में चरित्र-चित्रण की विभिन्न प्रणालियों का प्रयोग हुआ है, इनमें से प्रमुख रीतियों का विवेचन यहाँ प्रस्तुत है - ~~वर्णन०द्वारा०अथवा०प्रत्यक्ष०चरित्र०चित्रण००~~

<u>वर्णन द्वारा अथवा प्रत्यक्ष चरित्र-चित्रण :-</u> चरित्र-चित्रण की इस प्रणाली का सर्वाधिक प्रयोग वर्मा जी ने किया है। 'इन्स्टालमेण्ट' कहानी के चौधरी विश्वम्भरदयाल का चित्रण द्रष्टव्य है -'चौधरी विश्वम्भरदयाल गठे बदन के लम्बे-से युवक थे। उम्र करीब पच्चीस वर्ष की थी। रंग साँवला, चेहरा लम्बा और मुख की बनावट बहुत सुन्दर। बाल बीच से खिंचे हुए, कलम कान के नीचे तक और दाढ़ी-मूँछ साफ। चेहरे पर पाउडर और

1- हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद-डा० त्रिभुवनसिंह, पृ० 97

बर्फ क्रीम की एक हलकी सी अस्पष्ट तह । वह धारीदार सिल्क की शेरवानी पहने थे और उनकी टोपी, जिसे वह हाथ में लिये थे, उसी कपड़े की थी । गरारेदार पाजामा, पैर से मोजा नदारद, लेकिन पेटेण्ट लेदर का ग्रीशियन पम्प ।'[1] चौधरी साहब की रूपाकृति एवं वेशभूषा का चित्रण करने के पश्चात् कहानीकार ने उनसे सम्बंधित समस्त जानकारी का वर्णन रोचक शैली में किया है । इसी प्रकार 'प्रेजेण्टेस' की शशिबाला,'वरना हम भी आदमी थे काम के' के मियां राहत,'बेकारी का अभिशाप' के ललितमोहन,'पराजय और मृत्यु' की भुवनेश्वरी देवी,'वसीयत' के चूड़ामणि,'समझौता' के जयकृष्ण शर्मा और रत्नप्रभा,'गनेसीलाल का रामराज' के गनेसीलाल और 'मोर्चाबन्दी' के लाल संजीवन सिंह आदि अनेक पात्रों का चित्रण वर्णन द्वारा ही किया गया है । वर्णन द्वारा चरित्र-चित्रण की प्रवृत्ति वर्मा जी की कहानियों में प्रारम्भ से लेकर 'सारिका' की नई कहानियों में बराबर दिखती है ।

कथोपकथन द्वारा चरित्र-चित्रण(नाटकीय अथवा अप्रत्यक्ष चरित्र चित्रण :-स्वतंत्र रूप से कथोपकथन द्वारा चरित्र-चित्रण की स्थितियाँ वर्मा जी की कहानियों में कम आई हैं । जहाँ कहीं पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप द्वारा चरित्र-चित्रण हुआ भी है, वहाँ अधिकांशत: वर्णन द्वारा निर्मित पात्र के व्यक्तित्व को अधिक स्पष्टता एवं पुष्टि प्रदान करने के लिए ही हुआ है ।'दो बाँके' के दोनों उस्तादों के कथोपकथन से उनके पूर्व-प्रकाशित वैशिष्ट्य को पुष्टि मिलती मिली है -

इतने में इस पार वाले बाँके ने कहा- 'उस्ताद, गजब के कस हैं ।'

उस पार वाले बाँके ने कहा-'उस्ताद, बला का जोर है ।'

इस पार वाले बाँके ने कहा-'उस्ताद, अभी तक मैंने समझा था कि मेरे मुकाबिले का लखनऊ में कोई दूसरा नहीं है ।'

उस पार वाले बाँके ने कहा-'उस्ताद, आज कहीं जाकर मुझे अपनी जोड़ का जवाँ मर्द मिला ।'

इस पार वाले बाँके ने कहा-'उस्ताद, तबीयत नहीं होती कि तुम्हारे जैसे बहादुर आदमी का खून करूँ ।'

उस पार वाले बाँके ने कहा-'उस्ताद, तबीयत नहीं होती कि तुम्हारे जैसे शेरदिल आदमी की लाश गिराऊँ ।'

1- मेरी कहानियाँ - पृ० 91

थोड़ी देर के लिए दोनों मौन हो गये ; पंजा गुँथा हुआ, टस-से-मस नहीं हो रहा है ।

इस पार वाले बाँके ने कहा-'उस्ताद, झगड़ा किस बात का है ?'

उस पार वाले बाँके ने कहा-'उस्ताद, यही सवाल मेरे सामने है ।'

इस पार वाले बाँके ने कहा-'उस्ताद, पुल के इस तरफ के हिस्से का मालिक मैं ।'

उस पार वाले बाँके ने कहा-' उस्ताद, पुल के इस तरफ के हिस्से का मालिक मैं ।

और दोनों ने एक साथ कहा-' पुल की दूसरी तरफ से न हमें कोई मतलब है और न हमारे शागिर्दों को ।'[1]

छ उस्तादों (बाँकों) के इस वार्तालाप से उनके मिथ्याडम्बर एवं आत्मप्रशंसा के गुणों का बहुत कुछ प्रकाशन हो जाता है ।'पटा -बनेठी' की महामाया,'एक अनुभव' की वेश्या,'खिलावन का नरक' की स्त्री(खिलावन की पत्नी),'क्षमायाचना' के ज्ञान-प्रकाश,'दिल का दौरा ' के रामदीन और दुर्गा तथा'वसीयत' के चूड़ामणि के पुत्र-पुत्रियों का शील-निरूपण उनके कथोपकथन द्वारा हुआ है ।

<u>घटना एवं कार्य व्यपार द्वारा चरित्र चित्रण :-</u> वर्मा जी ने पात्रों के कार्य-व्यापार द्वारा उनका चरित्र प्राय: उद्घाटित किया है । पात्रों के क्रिया-कलाप एवं क्रिया-प्रतिक्रिया के द्वारा जहाँ कहानीकार ने दृश्य-विधान किया है, वहीं पात्रों का चारित्रिक वैशिष्ट्य भी झलक उठा है । 'रेल में ' शीर्षक कहानी का एक अंश द्रष्टव्य है -

'और 'तन्मयता' किस अवस्था का नाम है, यह मुझे उसी दिन मालूम हुआ । मेरी आँखों के आगे से महाशय कालीशंकर निकल गए, गाड़ी का वह डिब्बा निकल गया, मेरी गोदवाला बच्चा भी निकल गया - सिर्फ मेरे सामनेवाली स्त्री ही रह गई । मैं न सोच रहा था , न सुन रहा था --- केवल देख रहा था । और पता नहीं मेरी यह तन्मयता की अवस्था कितनी देर तक रही, पर मैं क होश में आ गया और होश में मैं आया तब जब मैंने एकाएक यह अनुभव किया कि कोई व्यक्ति मेरे हाथ से जबरदस्ती कोई चीज छीन रहा है । मैं चौंक उठा । मैंने देखा महाशय कालीशंकर मेरे हाथ से अपने बच्चे को छीन रहे हैं । उस समय उनकी मुद्रा देखने काबिल थी । मुँह लाल, हाथ-पैर काँप रहे थे और भौंह सिकुड़ी हुई ; आँखों की बाबत कुछ नहीं कह सकता क्योंकि एकाएक

1- मेरी कहानियाँ - पृ0 19-20

अपने अपराध की गुरुता मुझे मालूम हो गई थी और उनकी आँखों से अपनी आँखें मिलाना मेरे लिए असम्भव हो गया था। उन्होंने बच्चे को ही मेरे हाथों से नहीं छीना, वे उठे और अपनी पत्नी की बगल में अकड़कर बैठ गए। वहाँ बैठकर उन्होंने इस प्रकार मुझे देखा मानो वे मुझे खा जायेंगे।'[1] एक पर स्त्री को इस प्रकार तन्मयता से देखने और उस पर उसके पति की प्रतिक्रिया के चित्रण के द्वारा कहानीकार ने दोनों पुरुषों की दुर्बलता की ओर संकेत कर दिया है। एक उद्धरण 'दिल का दौरा' से भी देखिए -'ज्ञानी जी ने फिर दुर्गा का हाथ पकड़ा। उस समय उनकी आँखें जलने लगी थीं। चेहरा बुरी तरह तमतमा उठा था। उनके हाथ की पकड़ कसती जा रही थी।

दुर्गा ने अपने खाली बाएं हाथ से एक भरपूर तमाचा ज्ञानी जी के दाएं गाल पर रसीद(कर) दिया और ज्ञानी जी कुछ लड़खड़ा गये। हाथ की पकड़ ढीली पड़ गयी और दुर्गा हाथ छुड़ाकर तेजी से कमरे के बाहर चल दी।

दुर्गा का व तमाचा खाकर गौरमोहन तिलमिला उठे। झपटकर उन्होंने दुर्गा का पीछा किया। दुर्गा अपने क्वार्टर में पहुँचकर अन्दर से किवाड़ बंद करने ही वाली थी कि ज्ञानी जी ने किवाड़ को धक्का दिया और कमरे में घुस आये।

दुर्गा भय से काँप उठी। उसे लगा कि एक भूखा भेड़िया उसके कमरे में घुस आया है। और भी उसे याद आ गया कि कुछ साल पहले वह एक भेड़िये से निपट चुकी है जब वह लकड़ी काटने के लिए गाँव के बाहर जंगल में गयी थी। एक हंसिया थी उस समय उसके हाथ में, और उस हंसिया से उसने भेड़िया का काम तमाम कर दियाथा।'[2]

इस प्रकार के अनेक उद्धरण वर्मा जी की कहानियों में देखे जा सकते हैं। उनका विवरण देना यहाँ अनावश्यक विस्तार करना होगा।

<u>निरपेक्ष विश्लेषण द्वारा चरित्र-चित्रण :-</u> वर्मा जी की कहानियों में पात्रों के निरपेक्ष विश्लेषण के अवसर प्राय: कम आए हैं, क्योंकि कहानी में पात्रों की अल्प-संख्या में ऐसे पात्रों का अभाव होता है जिनकी मुख्य पात्रों से व्यक्तिगत मित्रता या शत्रुता न हो। फिर भी ऐसे कुछ स्थल तो मिल ही जाते हैं। 'मेज की तस्वीर' में रामनारायण अपनी पत्नी की प्रशंसा करता है, उसकी यह प्रशंसा उस समय सत्य प्रतीत होती है

1- मेरी कहानियाँ- पृ0 150

2- सारिका- दिसम्बर 1974, पृ0 43

जब हम देखते हैं कि रामनारायण विवाह के पूर्व किसी अन्य युवती से प्रेम करता था । ऐसी अवस्था में उसका अपनी पत्नी को प्रेम न करना ही स्वाभाविक होता, परन्तु इसके विपरीत वह अपनी पत्नी की प्रशंसा ही करता है - 'और मेरी स्त्री को देखो- वह सारा किस्सा जानते हुए भी कभी मेरी मेज पर मनोरमा के चित्र के रक्खे रहने पर विरोध नहीं करती - उफ़, मेरी स्त्री कितनी सीधी है - वह देवी है । अच्छा ही हुआ जो मनोरमा ने मुझसे विवाह नहीं किया - मेरी स्त्री मनोरमा से कहीं अच्छी है , कहीं अधिक सीधी है । मैं अपनी स्त्री से अधिक सुखी हूँ ।'[1]

<u>नामकरण द्वारा चरित्र-चित्रण :-</u> अपनी कुछ हास्य-प्रधान कहानियों में वर्मा जी ने पात्रों के नाम के द्वारा उनकी चारित्रिक विशेषताओं का प्रकाशन कर दिया है । 'अनशन' के मस्तराम पाण्डेय सम्पूर्ण कहानी के पश्चात् अपने मस्त तबीयत के होने का प्रभाव डालते हैं और साथ ही उनकी पेटू प्रवृत्ति का उद्घाटन जेल की घटनाओं से हो जाता है । नाम द्वारा पाण्डेय जी के गुणों का पता चलने के सम्बंध में स्वयं कहानीकार की टिप्पणी भी द्रष्टव्य है - 'पता नहीं किस प्रकार अपने पुत्र के जन्मकाल के समय ही पाण्डेय जी के पिता को अपने पुत्र के गुण मालूम हो गये थे क्योंकि ज्योतिषी वे थे नहीं और फिजियोनॉमी साइंस का अध्ययन करने का उन्हें कभी मौका न मिला था ; पर उन्होंने अपने पुत्र का नाम सोलह आने उसके गुणानुसार रक्खा था , पाण्डेय मस्तराम को जाननेवाले यह दावे के साथ कह सकते हैं । लम्बे-चौड़े गोल-मटोल और गोरे-चिट्टे जवान थे, हँसते थे तो बोर्डिंग की छत हिल उठती थी । दीन-दुनिया की उन्हें फिक्र न थी । पढ़ने-लिखने में उनका मन न लगता था । खाना,सोना और जब इनसे फुरसत मिले, तब गप लड़ाना - बस यही उनका काम था ।'[2] इसी प्रकार 'अनशन' के झटपटप्रसाद, 'लाला तिकड़मीलाल' के तिकड़मीलाल, फटीशजी, दरोगा गिरफ्तार अली, 'पटा -बनेठी' की महामाया आदि नाम पात्रों के गुण के अनुसार रखे गये हैं । किन्तु वर्मा जी की अधिकांश कहानियों में पात्रों के नाम को लेकर लेखक का कोई विशेष आग्रह नहीं रहा है । उसने लोक प्रचलित कोई भी नाम रख दिए है, कहीं-कहीं तो पात्र नाम-विहीन भी रह गये हैं- जैसे 'अर्थ-पिशाच' का धनी वृद्ध, 'परिचय हीन यात्री' के सज्जन आदि । इसके अतिरिक्त रमेश, परमेश्वरी, विश्वम्भर नाम ऐसे हैं जो कई कहानियों में मिल जाते हैं ।

1- मेरी श्रेष्ठ कहानियां - पृ० 134

2- वही- पृ० 46

<u>आत्म विश्लेषण द्वारा चरित्र-चित्रण</u> :- पात्रों के आत्म-विश्लेषण के द्वारा चरित्र-चित्रण का प्रयोग वर्मा जी की कहानियों में पुष्कल परिमाण में हुआ है। वर्मा जी की बहुत-सी कहानियाँ आत्मकथात्मक शैली में लिखी गयी हैं, अतः उनमें आत्म-विश्लेषण के लिए अनुकूल स्थिति बनाने के लिए विशेष प्रयत्न भी नहीं करना पड़ता। 'पराजय अथवा मृत्यु', 'राख और चिनगारी', 'बॉय! एक पैग और' तथा 'उत्तरदायित्व' में पात्रों के चरित्र का निरूपण आत्म-विश्लेषण के द्वारा ही हुआ है। इन कहानियों की आत्मकथात्मक शैली की प्रधानता के कारण इसमें पर्याप्त स्वाभाविकता भी आ गयी है। इन कहानियों के अतिरिक्त भी कुछ कहानियों में आत्मविश्लेषण सुन्दर बन पड़ा है। वर्मा जी के मन में कुछ विशिष्ट वर्ग के लोगों के लिए कटु आक्रोश एवं दुराग्रह रहा है, जिसके कारण उन पात्रों का चरित्र-चित्रण भी पक्षपातपूर्ण हो गया है। पूँजीपतियों के प्रति उनमें सदैव विद्रोह सुलगता रहा है, किन्तु उनकी 'अर्थ-पिशाच' कहानी में धनिक वृद्ध का आत्म-विश्लेषण पूर्वाग्रहयुक्त होते हुए भी अत्यंत स्वाभाविक एवं सटीक है। सारी जिन्दगी गरीबों का शोषण करने वाला मृत्यु का साक्षात्कार करने से घबराता है, डॉक्टर से चिरौरी करता है, उसे रुपये से भर देने का लालच देता है और अपने जीवन-भर के पापों का विश्लेषण करता है। कुछ अंश द्रष्टव्य है -' मैं वास्तव में शैतान हूँ, डाक्टर साहब, बहुत बड़ा शैतान। लोग मुझे करोड़पति कहते हैं और मैं हूँ भी। धन-वैभव और शक्ति मेरे पैरों पर लोटते रहते हैं, मनुष्यता को मैंने ठुकराया है। डॉक्टर साहब, मुझे बचाइए, हाथ जोड़ता हूँ, मुझे बचाइए। मैं आपको सोने से पाट दूँगा। अपनी सम्पत्ति का उपयोग करने के लिए मुझे जीवन दीजिए।'[1] इसी प्रकार 'मेज की तस्वीर' में रामनारायण का आत्म-विश्लेषण भी स्वाभाविक है। वह कहता है -' पर मैंने मनोरमा की तस्वीर अभी तक क्यों रख छोड़ी? मनोरमा मेरी है कौन? वह तो विगत एक सपना है - इससे अधिक कुछ नहीं। जब से हम दोनों अलग हुए तब से फिर एक बार मिले तक भी नहीं। फिर इसकी तस्वीर मेरी मेज पर क्यों है? और मेरी स्त्री को देखो - वह सारा किस्सा जानते हुए भी कभी मेरी मेज पर मनोरमा के चित्र के रक्खे रहने पर विरोध नहीं करती - उफ, मेरी स्त्री कितनी सीधी है - वह देवी है। अच्छा ही हुआ जो मनोरमा ने मुझसे विवाह नहीं किया - मेरी स्त्री मनोरमा से कहीं अच्छी है, कहीं अधिक सीधी है। मैं अपनी स्त्री से सुखी हूँ। फिर मनोरमा की फोटो को मेरी

1- मेरी कहानियाँ - पृ० 174

मेज पर क्या आवश्यकता - सब समाप्त हो गया तक उसकी याद ही क्यों बाकी रहे ---- आज इस तसवीर को नष्ट क्यों न कर दें - पर नहीं, नहीं, मैंने इससे प्रेम किया था - किया क्यों था, अब भी करता हूँ। यदि मैं उससे प्रेम न करता होता तो मुझे उस पर क्रोध क्यों होता ? हाँ, मैं कहता हूं कि मैं उससे अब भी प्रेम करता हूँ। क्या यह ठीक है ? मैं उसके विवाह में क्यों नहीं गया ? उसके विवाह के बाद मैं उससे फिर कभी क्यों नहीं मिला - केवल इसलिए कि मैं उससे क्रोधित हूँ, और यही क्रोध की भावना मेरे प्रेम की द्योतक है।'[1]

रामनारायण के इस आत्म-विश्लेषण से उसका चरित्र तो स्पष्ट ही होता है, साथ ही कथा का सूत्र भी शिथिल नहीं होता। मनोविश्लेषणात्मक एवं मनोवैज्ञानिक कहानियों से वर्मा जी की कहानियाँ इसी कारण कुछ अलग हो जाती हैं। उन्होंने अपनी कहानियों इस०००००००कु में मनोविज्ञान एवं विश्लेषण को वहीं तक स्थान दिया है, जहाँ तक उनसे कहानी की मुख्य समस्या के प्रतिपादन में या बव पात्र के चरित्र-निरूपण में सहायता मिलती है। उनकी कहानियों के आत्म-विश्लेषण क या मनोविश्लेषण की विशेषता यही है कि उसके द्वारा कथारस भंग नहीं हुआ है, वरन् कथा की रोचकता में वृद्धि हुई है। 'सारिका' में लिखी गयी वर्मा जी की सभी कहानियाँ व्यंग्यात्मक हैं - इसलिए उनमें आत्म-विश्लेषण एवं अन्तर्द्वन्द्व द्वारा चरित्र-चित्रण नहीं हुआ है।

<u>मानसिक ऊहापोह एवं अन्तर्द्वन्द्व द्वारा चरित्र-चित्रण</u> :- वर्मा जी ने विभिन्न स्थितियों में पड़े पात्रों की मानसिक स्थिति का भी कहीं-कहीं सुन्दर चित्रण किया है। 'बाहर भीतर' की कमला देवी अपनी सहयोगिनी के विवाह के निर्णय का तिरस्कार तो करती हैं, किन्तु इस घटना से उनके मन में अपने पूर्व जीवन की स्मृतियाँ उभर आती हैं और वह विह्वल हो उठती हैं -'सुबोध! सुबोध! तुम मुझे छोड़कर क्यों चले गये ? मैंने तुम्हारा अपराध किया, जानती हूँ; पर क्या वह इतना बड़ा अपराध था, जिसके लिए तुम मुझे क्षमा नहीं कर सकते थे ? नहीं-नहीं, मैंने ही तुम्हें त्यागा, मेरे क्षणिक आवेश ने हमारे पवित्र बन्धन के टुकड़े-टुकड़े कर दिये, हाय, अब सब समाप्त हो गया। मुझसे प्रेम करने वाला कौन है ? कोई नहीं, कोई नहीं।'[2]

1- मेरी कहानियाँ- पृ० 134-135

2- वही- पृ० 180

`उत्तरदायित्व` की शीला की मनोविकृति उन्हीं के शब्दों में द्रष्टव्य है - `अब सवाल आता है कि मुझे अच्छा क्यों लगता है ? यह तो मानव-प्रकृति है, या यदि आप इसे मानव-दुर्बलता कहें तो इसमें भी मुझे कोई आपत्ति नहीं है। फिर आप पूछेंगे कि मैं उन लोगों पर यह क्यों नहीं स्पष्ट कर देती हूँ कि मैं उनसे प्रेम नहीं करती। मुझे केवल इसमें सुख मिलता है कि वे मेरी पूजा करें, मेरे इशारों पर नाचें, कि मैं उन्हें अपना खिलौना बनाकर खेलूँ। इसका भी उत्तर स्पष्ट है, मिस्टर रंजन ! हम सब खेलना चाहते हैं, जीवन स्वयं ही एक खेल है। दुखी है जो अच्छी तरह से खेल नहीं सकता। मैं अपने खिलौनों पर यह सत्य प्रकट करके अपने खेल को बिगाड़ूं क्यों ?`[1]

जहाँ तक अन्तर्द्वन्द्व का प्रश्न है - वर्मा जी की कहानियों में मानसिक उथल-पुथल की सूचना तो प्राय: दी गयी है, किन्तु उसका सूक्ष्म अंकन बहुत कम हुआ है। `पराजय अथवा मृत्यु` और `राख और चिनगारी` में मानसिक-संघर्ष के पर्याप्त अवसर थे, किन्तु वहाँ भी लेखक की लेखनी उसके चित्रण में बहुत रमी नहीं है। कहीं अन्तर्द्वन्द्व की सूचना भर दी गयी है - जैसे-`ऊपर से मैं प्रसन्न थी ; पर अन्दर ही अन्दर एक भयानक द्वन्द्व मचा हुआ था मुझमें।`[2]-----`इधर पिछले कई दिनों से मेरे ऊपर क्या बीत रही है तुम नहीं जानते हो। रात-रात भर मैं रोई हूँ, तड़पी हूँ, अपने से लड़ी हूँ।`[3]और कहीं कहीं अन्तर्द्वन्द्व का रूप भी प्रकट हुआ है -`अब मेरे सामने प्रश्न यह है कि मैं पराजय स्वीकार करूँ ? उस युवक से विवाह करने का अर्थ है मेरी पराजय। मैं जानती हूँ कि मैं उसका विरोध नहीं कर सकती, कोई भी ज्यादती वह मुझ पर करे, मैं चुपचाप उसे सह लूँगी बिना उफ़ किए हुए। मैंने उसे आत्मसमर्पण कर दिया है, वह मेरा देवता है,मेरा भगवान है- मेरा सब कुछ है। आज मैं उस भयानक सत्य को देख रही हूँ कि स्त्री पुरुष की गुलामी करने के लिए बनाई गई है। मेरे सामने दो मार्ग हैं - पराजय अथवा मृत्यु। इन दोनों में मुझे चुनना है - और मैं मृत्यु चुनती हूँ।`[4]

इस उद्धरण से भी इतना तो स्पष्ट है कि मृत्यु का आलिंगन करने के पूर्व जिस मानसिक पीड़ा का अनुभव भुवनेश्वरी देवी ने किया होगा, उसका बहुत हृदयग्राही एवं

1- मेरी कहानियाँ- पृ० 168

2- वही- पृ० 274

3- वही- पृ० 275

4- वही- पृ० 189

एवं सूक्ष्म अंकन कहानीकार नहीं कर सका है और पात्र द्वन्द्व की स्थिति से बहुत शीघ्र निकलकर एक निर्णय पर पहुँच गया है ।

वर्मा जी ने अपनी कहानियों में चरित्र-चित्रण को महत्व तो दिया है, किन्तु अपने परवर्ती कहानीकारों की भाँति अंतरंग चित्रण में उनकी वृत्ति अधिक रम नहीं पायी है । परन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि पात्रों की क्रिया-प्रतिक्रिया, भाव-अनुभाव के चित्रण तथा मानसिक ऊहापोह के सूचन से वर्मा जी ने पात्रों के आलोड़न-विलोड़न की प्रतीति अवश्य करा दी है ।

कहानी में पात्रों के चरित्र के विभिन्न पहलू दिखाने का पर्याप्त अवसर नहीं होता, तथापि कुछ चरित्र ऐसे अवश्य होते हैं, जिन पर परिस्थितियाँ अपना प्रभाव डाले बिना नहीं रहतीं । वर्मा जी की कहानियों के कुछ पात्र तो ऐसे हैं, जो प्रारम्भ से अंत तक सामान्य बने रहते हैं - अर्थात् उनके जीवन का एक ही पहलू दिखाया जाता है और उनके विचार तथा क्रिया-कलापों में विशेष अंतर नहीं आता जैसे 'तिजारत का नया तरीका' के खुशबख्तराय, 'लाला तिकड़मीलाल', 'अनशन' के मस्तराम पाण्डेय, 'इन्स्टालमेण्ट' के चौधरी विश्वम्भरसहाय तथा 'रेल में' के कालीशंकर आदि । किन्तु वर्मा जी की कहानियों में उच्चावच चरित्रों[1] की संख्या भी कम नहीं है । परिस्थितियों के प्रवाह में उनका जीवन आमूल परिवर्तित हो जाता है । ऐसे पात्रों के चित्रण में कहानीकार को पर्याप्त सावधानी बरतनी पड़ती है । कहानीकार को पात्रों के आन्तरिक संघर्ष एवं द्वन्द्व एवं विचार-परिवर्तन की अन्त:प्रेरणाओं का सफल अंकन करना पड़ता है । वर्मा जी की 'पराजय अथवा मृत्यु', 'नाजिर मुंशी', 'राख और चिनगारी', 'उन्माद', 'क्षमायाचना' आदि कहानियों के प्रमुख पात्र ऐसे हैं जिनके जीवन की परिस्थितियों एवं उनके कारण हुए परिवर्तनों का वर्मा जी ने सफल चित्रण किया है । कहानीकार पात्रों के अन्तर्मन के चित्रण में भले ही पर्याप्त सफल न हुआ हो, किन्तु पात्रों के जीवन में आनेवाले परिवर्तन के पीछे काम करनेवाली अन्त:प्रेरणाओं का संकेत उसने अवश्य कर दिया है । 'नाजिर मुंशी' के चरित्र से इस बात को अच्छी तरह समझा जा सकता है । नाजिर मुंशी प्रारम्भ में

1- 'दूसरे प्रकार के पात्र अथवा चरित्र वे होते हैं जो कि निरंतर परिवर्तनशील होते हैं, इस अर्थ में कि उच्चावच प्रेरणाओं के अनुरूप असम गति से कभी ऊपर और कभी नीचे होते रहते हैं । उनके गति-विस्तार में समय-समय पर मोड़ के स्थल आते रहते हैं । - कहानी का रचना-विधान- डा० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, पृ० 97

गरीब किन्तु हँसमुख, किसी भी आदमी को बातों में उड़ा देने वाले, हाजिर-जवाब और किसी से न दबने वाले व्यक्ति के रूप में चित्रित किए गए हैं और पच्चीस वर्ष के पश्चात् उनका जो रूप पाठक के समक्ष आता है, वह अत्यंत दयनीय है। अपने प्रत्युत्पन्नमतित्व के कारण सबको अपनी ओर आकृष्ट करनेवाला व्यक्ति दूसरों की कृपादृष्टि की भीख माँगता दिखता है, मजाक करना मानो उनका कर्तव्य हो गया था, वे अपने को गुलाम और खिदमतगार मानने लगे थे। इस परिवर्तन का कारण कितना संक्षिप्त एवं सटीक है - "उस समय मेरे सामने धन का पिशाच अपनी सारी पाशविकता, कुरूपता तथा शक्ति के साथ खड़ा हो गया। उस समय मैंने देखा कि जिसे हम मनुष्यता कहते हैं, वह धन के पिशाच के पैरों पर झुकी हुई उसकी पूजा कर रही है। मैं एकाएक सिहर उठा।"[1] नाजिर मुंशी के इस परिवर्तित रूप का केवल वर्णन कहानीकार ने किया है। उनके अंतस् के भावों का प्रकाशन कहीं नहीं हुआ है, किन्तु ललचाई आँखों से व्हिस्की की ओर देखना, नाश्ते के समय बड़े (अमीर) लोगों में संकोच के साथ बैठना, लोगों की बातचीत में दखल न देकर ऊँघने लगना, अपने को गुलाम और खिदमतगार कहना आदि संकेत देकर वर्मा जी ने नाजिर मुंशी के परिवर्तन का यथार्थ अंकन किया है और उनके परिवर्तन के कारण स्पष्टीकरण भी बखूबी किया है। एक समीक्षक ने लिखा है कि "कहानी में चरित्र-चित्रण का महत्व सब से अधिक है, क्योंकि कलात्मक दृष्टि से एक ओर कहानी की संक्षिप्त सीमा के कारण चरित्र का विकास दिखाने का अवसर बहुत ही कम रहता है और दूसरी ओर चरित्र-चित्रण की संभावनाएँ इतनी सीमित रहती हैं कि उनसे चरित्र को स्पष्ट करना परम हस्तलाघव की परीक्षा है। कहानी में इतनी सुविधा नहीं होती कि पात्रों का पूरा विवरण देकर उनकी अवस्था, रूप, रंग और अन्य स्थितियों को पूर्ण चित्रित किया जाय यहाँ तो सीमाओं के अन्तर्गत गागर में सागर भरने को होता है।"[2] वर्मा जी की कहानियों की विशेषता है कि उन्होंने एक बार पात्रों की तमाम विशेषताओं का विवरण देने का अवसर तो अधिकांशतः निकाल ही लिया है। इस विवरणात्मक टिप्पणी में भी उनका हस्तलाघव कौशल देखा जा सकता है, क्योंकि 3-4 पंक्तियों में ही पात्र

1- मेरी कहानियाँ- पृ० 235

2- हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास-डा० लक्ष्मीनारायणलाल, पृ०331

की यथोच्छित विशिषताओं का समाहार कर दिया जाता है और इसके बाद पात्रों के क्रिया-कलाप और कथोपकथन में उनका चरित्र विकास पाता है। ध्यातव्य है कि वर्मा जी की कहानियाँ आकार में अधिकांशत: लघु हैं, इन लघु कहानियों में पात्रों का जीवन अधिक-से-अधिक अभिव्यक्ति पा सका है। इससे वर्मा जी की थोड़े में बहुत कह देने की कला का अनुमान लगाया जा सकता है।

स्त्री-पुरुष पात्रों के सम्बंध में यों वर्मा जी का विशेष दुराग्रह तो नहीं रहा है, उन्होंने पुरुष और स्त्री दोनों की ही दुर्बलताओं एवं क्षमताओं का निष्पक्ष चित्रण किया है, किन्तु शिक्षिता नारी के प्रति उनका आक्रोश अवश्य व्यक्त हुआ है। उनके विचार से शिक्षित नारियों में हृदयहीनता आ जाती है, वे धन के पीछे दौड़ने लगती हैं-प्रेम का मूल्य आँक नहीं पातीं और अपनी भावनाओं की उपेक्षा करने के साथ-साथ वे दूसरों को भी दिग्भ्रमित करती हैं।

अंतत: हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि वर्मा जी ने अपनी कहानियों में चरित्र-चित्रण को पर्याप्त महत्व दिया है। वस्तु-जगत से पात्रों का चयन करके उनमें समस्या का रंग भरकर उन्होंने कहानियों का निर्माण किया है। उनके पात्र सच्चे,यथार्थ एवं स्वाभाविक बन पड़े हैं।

<u>वर्मा जी की कहानियों में कथोपकथन</u> :- उपन्यास और कहानियों में कथोपकथन के समावेश का उद्देश्य एक ही होता है। कहानी में भी कथोपकथनों का प्रयोग मुख्य रूप से कथावस्तु के विकास एवं पात्रों के चरित्र-चित्रण के लिए कियाजाता है, किन्तु उपन्यास और कहानी के संवाद-धर्म में किंचित् भिन्नता भी होती है। 'कथा साहित्य के अन्तर्गत उपन्यास में इसका स्वच्छंद , अनियंत्रित और अपरिमित विहार मिलता है, परन्तु कहानी में इसका लघु-प्रसारी, वैदग्ध्यपूर्ण, आकर्षक और चमत्कारी प्रयोग ही इष्ट होता है।'[1]

वर्मा जी ने अपनी कहानियों में कथोपकथन का खुलकर प्रयोग किया है। उनके संवादों की विशेषता है कि उनसे एक साथ कई उद्देश्यों की पूर्ति की जाती है। 'उन्माद' कहानी से एक उद्धरण द्रष्टव्य है -

मैंने कहा, 'नीलिमा यह क्या ? इस समय तुम कैसे चली आईं ?'

1- कहानी का रचना विधान- डा० जगन्नाथप्रसाद शर्मा, पृ० 122

'मैं तुम्हारे बिना नहीं रह सकती मधु। मुझे यह परिवार की चक्की का सुख नहीं चाहिए, बिल्कुल नहीं चाहिए।'

'तुम पागल न बनो नीलिमा, तुम वास्तविकता पर ध्यान दो।' मैंने कहा।

'वास्तविकता यह है कि मैं तुम्हारी हूँ - तुम्हारी। तुम अकेले हो, तुम इससे इन्कार नहीं कर सकते, और मैं भी अकेली हूँ। उस आदमी के साथ, जिसके बच्चों को मैंने जन्म दिया, किस घुटन के साथ मैं रही हूँ, यह मैं ही जानती हूँ। मैंने तुम्हें भूलने का प्रयत्न किया, तुम्हारे हित का ध्यान रखकर, तुम्हारे परिवार के हित का ध्यान रखकर। और अब तुम मुक्त हो।'

अजीब पागलपन की चमक थी उसकी आँखों में। मैं घबरा गया। मैंने कहा, 'नीलिमा, तुम आप में नहीं हो - तुम नहीं जानतीं कि इसमें हम लोगों की कितनी बदनामी होगी, हम लोग समाज में तिरस्कृत और लांछित होंगे।

'यह कुछ नहीं होगा, मधु, मेरे पास मेरा निजी रूपया है - करीब दो लाख, और मैंने अपना पासपोर्ट बनवा लिया है। तुम्हारे पास तुम्हारा पासपोर्ट है ही। परसों वाले हवाई जहाज से दो सीटें मिल रही हैं, इंगलैण्ड के लिए।'

'यह सब गलत है - बिल्कुल गलत नीलिमा - तुम अपना जीवन नष्ट कर रही हो।

नीलिमा ने दृढ़ता-भरे स्वर में कहा, मैं तय कर चुकी हूँ मधु- मैं तुम्हें किसी हालत में भी नहीं छोड़ सकती। मैं परसों सुबह सात बजे तुम्हारे पास आऊँगी। कल का दिन तुम्हारे पास है। कल तुम अपनी स्टूडियों का प्रबन्ध कर लो। मैंने दो सीटें बुक करा ली हैं, नौ बजे हवाई जहाज जाता है।'[1]

इस सम्पूर्ण वार्तालाप से पात्रों का चरित्र और उनकी मानसिक स्थिति का प्रकाशन तो होता ही है, साथ ही आगे की कथा के नवीन मोड़ की सूचना भी मिल जाती है। वर्मा जी की कहानियों में संवादों से अधिकाधिक काम निकालने के लिए उनका प्रयोग इस प्रकार किया गया है कि उनसे पात्रों के चारित्रिक विशेषताएं भी उद्घाटित होती जाएँ और कथा का विकास भी होता जाए। उदाहरणस्वरूप खुशवक्तराय-सुरेखा संवाद[2], लाला घासीराम-तिकड़मीलाल संवाद[3], शशिबाला-परमेश्वरी संवाद[4], राहतमियां-बाबूसाहब(कहानी वक्ता)संवाद[5], जयकृष्ण-रत्नप्रभा आदि संवाद[6], गौरमोहन-रामदीन संवाद[7]

1- मेरी कहानियाँ-(1) पृ० 293,(2)पृ० 35 से 37,(3) पृ० 42-43
(4) पृ० 99 से 101, (5) पृ० 106-107

6- सारिका-अक्तूबर 1974,पृ० 45-47

7- सारिका-दिसम्बर,पृ० 43 सन् 1974

आदि देखे जा सकते हैं ।

वर्मा जी की कुछ कहानियाँ तो ऐसी हैं, जिनमें कहानी का सम्पूर्ण सौन्दर्य कथोपकथन में ही केन्द्रित हो गया है । `प्रायश्चित` कहानी में बिल्ली को मारने की घटना के बाद कहानी अधिकांशत: संवादों के माध्यम से कही गयी है और यह संवाद इतने सार्थक एवं सटीक हैं कि इनसे कथा का विकास भी होता है, पात्रों का चरित्र भी निखरता है और कहानीकार का उद्देश्य भी व्यक्त हो जाता है । इसी प्रकार `दो बाँके` कहानी का सम्पूर्ण ढाँचा (लेखक की लखनऊसम्बंधी टिप्पणी-पृष्ठभूमि को छोड़कर) विभिन्न पात्रों के वार्तालाप पर ही निर्मित हुआ है । `बाहर-भीतर` कहानी में भी कहानीकार का उद्देश्य चारों महिला-प्राध्यापिकाओं के वार्तालाप [illegible] के द्वारा मुखर हो सका है, इसके अतिरिक्त अध्यापिकाओं की मानसिक स्थिति का उद्घाटन हो गया है । `खिलावन का नरक` में जिलादार एवं सुखिया (खिलावन की पत्नी) का वार्तालाप तो अद्भुत अभिव्यंजना -शक्ति का परिचय देता है । खिलावन तीन साल बाद बड़ी हसरत से अपने घर लौटता है । घर से थोड़ी दूर रह जाने पर अचानक पानी बरसने लगता है और वह एक मंदिर में पानी से बचने के लिए शरण लेता है, उस समय उसे अँधेरे में एक स्त्री और एक पुरुष की बातचीत सुनायी देती है ।

`यह बारिश भी अजब बेमौके शुरू हो गई । भगवान जाने कब तक होती रहे ।`

और उसका उत्तर मिला, `तुम्हें क्या - मुसीबत तो हमारी है । अम्मा जी पुछिहैं - कहाँ रही- तब का कहब ? और अम्मा जी दद्दा से एक एक की सौ-सौ क जड़िहैं।`

खिलावन के मानो काटो तो खून नहीं; यह आवाज तो सुखिया की थी । सुखिया उस समय मन्दिर में, और उसके साथ आदमी । दबे पाँवों वह और भीतर खिसका ।

मर्द ने कहा, `अरी कुछ न होगा । तेरी सास बक-झक कर चुप हो जाएगी। हाँ- उस दिन तेरे ससुर ने जो मुझे देख लिया था, तो क्या हुआ ?`

`होता क्या ?` आवाज औरत की थी -`पहिले तो बहुत बिगड़े, कहिन की हम नाक कटाय दीन्ह - घर से निकसै की धमकी दीन्ह - लेकिन जब चाँदी की हँसली देखिन और अम्मा जी हमरे अँचरा माँ बँधे पाँच रुपैया जो हमें दीन्हि रहो खोल के उनके सामने रख दीन्हिन, तो शान्त हुई गे ।` और स्त्री हँस पड़ी ।

खिलावन के मुख पर पसीने की बूँदें आ रही थी ।

मर्द ने फिर कहा, `और वह तेरा वह- उसकी कुछ खबर मिली ।`

'कहा- आज कै महीना से न एक रूपया भेजिस और न कौनो चिट्ठी पत्री लिखिस । मालुम होत है कौनो रॉड के फेर माँ पड़िगा । नास होय ऊका । इहाँ घर माँ सब भूखन मरत हैं, तुम्हरे पाँच रुपैया से आज खाना मिला है' - और कुछ रुककर स्त्री ने फिर कहा ,' हमरे देवर का एक-आध बीघा जमीन दिवाय देय । जिलादार आप तो इतनो नहीं करि सकत हो ?'[1]

द्रष्टव्य है कि इन दो स्त्री-पुरुष के सम्भाषण से कहानीकार ने कितना-कुछ कह दिया है । इस सुखिया की शक्ल-सूरत से भी पाठक परिचित नहीं हो पाता, किन्तु सुखिया की बातें विदेश में रहकर धन कमानेवाले निम्नवर्गीय लोगों की पारिवारिक स्थिति नैतिक पतन की विवशता तथा अर्द्धग्रामीण क्षेत्रों में रहनेवाले सरकारी कर्मचारियों की चारित्रिक कमजोरी का कच्चा चिट्ठा खोलकर रख देती हैं ।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि वर्मा जी ने अपनी कहानियों में अत्यंत सार्थक एवं उपयुक्त संवादों का प्रयोग किया है । वह इतने चुस्त हैं कि थोड़े में बहुत-सी बातें कह जाते हैं । वर्मा जी की कहानियों में सैद्धांतिक वाद-विवाद के स्थल बहुत कम हैं, इसलिए कथोपकथन संक्षिप्त हैं । कथोपकथन वहीं अधिक लम्बे हैं, जहाँ पात्रों के माध्यम से कोई विशेष घटना या परिस्थिति का उल्लेख किया गया है । ऐसे स्थलों पर भी कथारस के कारण रोचकता बनी रही है और संवाद की लम्बाई खटकने नहीं पाई है ।

रूप विधान की दृष्टि से कथोपकथन प्राय: तीन शैलियों में मिलते हैं[2]—

(अ) पूर्ण नाटकीयता के रूप में

(ब) पात्रों की मुद्राओं के संकेत के साथ

(स) पात्रों की मुद्राओं और स्थितियों के विवेचन के साथ-साथ उन कार्य-व्यापारों और घटनाओं के ख उल्लेख जो पात्रों के कथोपकथन, काल की स्थिति में चरितार्थ होते रहते हैं ।

वर्मा जी ने अपनी कहानियों में अधिकांशत: कथोपकथन की तीसरी शैली का ही प्रयोग किया है । वार्तालाप के समय पात्रों की परिस्थिति, क्रिया-प्रतिक्रिया, मुखमुद्रा आदि का विवेचन करने के लिए कहानीकार सदैव पात्रों के साथ रहता है । इससे पात्रों के

1- मेरी कहानियाँ- पृ० 118-119

2- हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास-डा० लक्ष्मीनारायण लाल, पृ० 335-36

कथोपकथन अधिक प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्ति पाते हैं तथा कहानी का अभिव्यंग्य कुतूहल एवं जिज्ञासा बनाए रखते हुए भी अपनी स्पष्ट ध्वनि छोड़ जाने में समर्थ होता है।

वर्मा जी के उपन्यासों की ही भाँति उनकी कहानियों के संवादों की भी सबसे बड़ी विशेषता उनकी स्वाभाविकता, पात्रानुकूलता एवं भावानुरूपता है। भाव या पात्र के अनुरूप कथनों को गढ़ना वर्मा जी को खूब आता है। वर्मा जी की कहानियों में ग्रामीण या अल्पशिक्षित पात्र कम आए हैं, किन्तु जहाँ वे थोड़ी देर के लिए भी आए हैं, अपनी स्थानीय बोली का प्रभाव छोड़ ही गए हैं। 'दो बाँके' के ग्रामीण का 'भुला स्वांग खूब भरयो' - कहना कहानी में अद्भुत सौन्दर्य भर देता है। इसी प्रकार 'रहस्य और रहस्योद्घाटन' में चपरासियों का निष्कर्ष उनके मानसिक स्तर के अनुकूल तो है ही, बड़े लोगों के रहस्यभरी बातों का रहस्योद्घाटन भी कर जाता है। 'प्यारी', 'संकट', 'दिल का दौरा' तथा 'मोर्चेबन्दी' कहानियों के निम्नवर्गीय पात्रों की लोक भाषा के कारण संवादों में बहुत स्वाभाविकता आ गयी है। पृथक्-पृथक् वर्ग एवं स्तर के व्यक्तियों की भाषागत विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए वर्मा जी ने संवादों का निर्माण किया है। 'वरना हम भी आदमी थे काम के' के मियाँ राहत जब उर्दू मिश्रित भाषा बोलते हैं और अपने शेर सुनाते हैं, तो उनका सम्पूर्ण रूप ही मानों सजीव हो उठता है और उनकी पत्नी का -'निगोड़ा, कलमुँहा कहीं का। नौकरी छोड़ आया, हम लोगों को भूखा मारने के लिए। ले, नौकरी छोड़ने का मजा ले।'[1] कथन निम्नवर्गीय लड़ाकू मुस्लिम औरत का चित्र हमारी आँखों के समक्ष उपस्थित कर देता है। वर्मा जी की परवर्ती कहानियों के संवाद तो इस दृष्टि से और अधिक सशक्त हैं। कुछ उद्धरण देख लेना पर्याप्त होगा।

'संकट' में एक भूतपूर्व जमींदार के पुत्र, जो स्वयं खेती करते एवं कराते हैं, अपने पुरोहित से कहते हैं -'आओ हो घुमरी। ----- साइत बिचार के चले हो सरऊ, तो तुमहूँ माँग छान लेव।'[2] एक छोटे-से होटल के प्रबंधक का एक एक कवि से कथन-'ससुर, रात-रात भर पतुरिया ऐस महफिल माँ गला फाड़-फाड़ कर चिचियात हो तो सरम नहीं आवत, सौदा बेचे माँ नानी मरत हैं।'[3] 'रंगीलेलाल तीर्थयात्री' के एक हलवाई का कथन-'और तो आप हजरतगंज से अशोक मार्ग पर जाइये। वह जो तिमंजिली बंगला-नुमा कोठी है, वह उन्हीं की आप समझो। सेठ बनवारीलाल का नाम लिया होता तो हम पहले

1- मेरी कहानियाँ- पृ० 107

2- सारिका-जून 1974, पृ० 56

3- सारिका-जून 1974, पृ० 59

ही बताय देइत । लखनऊ के सबसे बड़े सेठ उन्हीं का समझो ।'[1] ऐसे ही जाने-कितने उदाहरण वर्मा जी की कहानियों में भरे पड़े हैं। नित्य की बोलचाल की भाषा में लोग आदतन जिन गालियों का प्रयोग कर जाते हैं, उनका प्रयोग भी वर्मा जी ने किया है,यथा ससुर, साले, ससुरी, हरामजादे आदि । किन्तु अति अश्लील गालियों का प्रयोग उन्होंने केवल स्वाभाविकता लाने के लिए कहीं नहीं किया है।`जबरा मारे रोने न दे` में ऐसी गालियों के लिए अनुकूल अवसर भी था, किन्तु औचित्य का ध्यान रखते हुए कहानीकार ने बड़ी अभिव्यंजनापूर्ण भाषा में कथोपकथन की स्वाभाविकता बनाए रखी है -`रामाधार एकाएक उबल पड़ा -- नहीं खोलेगा साले ---- और उसने पुलिसवालों के मुख को शोभित करनेवाली गालियों का एक गुच्छा उगलते हुए अपनी लाठी का भरपूर वार उसके दरवाजे पर किया ।'[2] वर्मा जी ने अपनी कहानियों में हास्य-व्यंग्य, प्रत्युत्पन्नमतित्व एवं शिष्टाचार आदि का भी यथोचित उपयोग किया है । `नाजिर मुंशी` में विवाह के अवसर पर नाजिर मुंशी का हँसी-मजाक एवं हाजिरजवाबी एक ओर रोचकता लाती है, तो दूसरी ओर बारात एवं शादी-ब्याह के हल्के-फुल्के वातावरण को भी साकार कर देती है ।'[3]

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि वर्मा जी की कहानियों के कथोपकथन अत्यंत स्वाभाविक, रोचक एवं अभिव्यंजनापूर्ण हैं । उनमें अतिशय नाटकीयता नहीं है, जो कहानी में एकांकी का भ्रम उत्पन्न कर दे । उनके कथोपकथन में कहानी की विशिष्ट स्थितियों, पात्रों की क्रिया-प्रतिक्रिया एवं भावावेग को सजीवता से उपस्थित कर देने की अपार क्षमता विद्यमान है ।

<u>वर्मा जी की कहानियों की भाषा-शैली</u> :- भाषा-शैली ही वह तत्व है, जिसके माध्यम से कोई साहित्यकार अपने मनोभावों की अभिव्यक्ति करता है । प्रत्येक साहित्यकार की भाषा-शैली पृथक्-पृथक् होती है । वर्मा जी की भाषा-शैली का विस्तृत अध्ययन हम पहले कर चुके हैं । उपन्यास और कहानी की भाषा में कोई विशेष अंतर नहीं होता, दोनों ही गद्य-रूप ~~में देखी जा सकती हैं~~ हैं अतः कथाकार की भाषा संबंधी विशिष्ट प्रवृत्तियाँ समान रूप से दोनों में देखी जा सकती हैं। वर्मा जी की कहानियों की भाषा-शैली भी उनके उपन्यासों की भाषा-शैली से भिन्न नहीं है । यहाँ वर्मा जी की कहानियों की भाषा-शैली की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं पर ही हम विचार करेंगे ।

1- सारिका-जुलाई, 1974, पृ० 62

2- सारिका-जनवरी 1975, पृ० 41

3- मेरी कहानियाँ-पृ० 231-233

वर्मा जी ने अपनी कहानियों में मुख्य रूप से बोल-चाल की सहज-सरल भाषा-शैली का प्रयोग किया है। उनके कुछ उपन्यासों में तो विषय के अनुरूप अलंकृत एवं गुम्फित शैली का उपयोग किया भी गया है, किन्तु कहानियों की भाषा में तो कहीं भी आलंकारिक भाषा का प्रयोग नहीं मिलता। फिर भी यह वर्मा जी की भाषा की विशेषता है कि वे अपनी बात को अनुभूति की इतनी गहराई से प्रस्तुत करते हैं तथा सीधे-सादे ढंग से, थोड़े- से शब्दों में इस प्रकार व्यक्त कर देते हैं कि पात्र, भाव या विचार, स्थान एवं क्रिया-कलाप का पूर्ण चित्र हमारी आँखों के समक्ष उपस्थित हो जाता है। एक छोटा-सा उद्धरण 'कुँवर साहब मर गये' कहानी से द्रष्टव्य है। कहानी वक्ता(मैं) जब तीन दिन की बीमारी के बाद जबरदस्ती से कांग्रेस के कार्यों में सम्मिलित होने चले जाते हैं और सब स्वयंसेवकों के गिरफ्तार होने के बाद घर लौटते हैं, उस समय घर के लोगों की प्रतिक्रिया का चित्रण वर्मा जी की संक्षिप्त, रोचक एवं सटीक भाषा का सुन्दर निदर्शन प्रस्तुत करता है —

'मैं भी उठा, ताँगा मँगवाकर घर पहुँचा। मुझे देखते ही पिता जी ने अपना मुँह फेर लिया। माता जी ने एक दीर्घ नि:श्वास के साथ आँखों से दो आंसू गिराए, श्रीमती जी ने महावीर जी पर पांच पैसे के बताशे चढ़ाए और श्रीमानजी पलँग पर लुढ़क पड़े।'[1]

इन थोड़े-से शब्दों में पिता-माता और पत्नी की भावनाओं का अंकन हो गया है। कहानी की भाषा में जिस हस्तलाघव की अपेक्षा होती है, वह वर्मा जी की भाषा में बराबर बना रहा है।

वर्मा जी ने उपन्यासों की ही भाँति कहानियों में भी लोक-प्रचलित मुहावरों, कहावतों एवं सूक्तियों का प्रयोग खूब किया है। इनसे भाषा में स्वाभाविकता एवं प्रवहमयता आ गयी है। स्वाभाविकता की अभिवृद्धि के लिए वर्मा जी ने प्रेमचन्द जी की भाँति उर्दू मिश्रित भाषा का प्रयोग किया है। जिन्दादिली, नफासत, खानदान, हुजूर, शाहजादी बादशाह सलामत, मुनासिब, अमीर-उमराव, इम्तहान, हद, नदारद, याददाश्त, दाद, असबाब, तनख्वाह, न्यौछावर जैसे अति प्रचलित अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग तो उन्होंने किया ही है, इसके अतिरिक्त वसीका, लाहौलविला कूवत, परीजादों एवं परस्तिश जैसे अप्रचलित शब्दों का प्रयोग भी वर्मा जी ने मुसलमान पात्रों के मुख से करवा दिया है;

1- मेरी कहानियाँ- पृ० 203

किन्तु अप्रचलित शब्दों की संख्या काफी कम है। इसी प्रकार वर्मा जी की कहानियों की भाषा के सहज सरल प्रवाह में अंग्रेजी के भी पर्याप्त शब्द मिल जाते हैं। एंग्लो-इण्डियन गर्ल, पर्स, अप-टू-डेट, एजेन्सी, कनवोकेशन,रेस्टोरां,जेंटिलमैन, मजिस्ट्रेट,फ्लूक,फुटबाल-फील्ड, इन्स्टालमेण्ट, पेटेण्ट लेदर, ग्रीशियन पम्प शू, थियेटर, कार्निवाल,सरकस,सिनेमा, बाल डान्स फैन्सी-ड्रेस,एक्सेलेन्ट,इरिगेशन जैसे अंग्रेजी शब्दों का वर्मा जी ने बिना किसी संकोच के प्रयोग किया है। 'सारिका' वाली कहानियों में तो अंग्रेजी शब्दों की भरमार है। संभवत: बड़े-बड़े अफसरों, व्यापारियों, प्रोफेसर जैसे उच्च मध्यवर्गीय पात्रों की भाषा को ध्यान में रखकर वर्मा जी ने इनका प्रयोग किया है।

वर्मा जी की कहानियों म की भाषा विषय,पात्र एवं अवसर के अनुकूल रही है। उपन्यास की तुलना में उनकी कहानियों में पात्रों की संख्या बहुत कम रही है और उनका कार्यक्षेत्र भी सीमित रहा है। फलत: अलग-अलग प्रांत, धर्म एवं जातियों के व्यक्तियों का वैभिन्य उसमें अधिकांशत: दृष्टिगत नहीं होता, इसीलिए उनकी कहानियों में भाषा की अत्यधिक विविधता नहीं दिखती। फिर भी जितने पात्र हैं, उनकी मानसिक,शैक्षणिक एवं सामाजिक स्थिति के अनुकूल भाषा को गढ़कर वर्मा जी ने अपने शब्द-संयम का सुन्दर परिचय दिया है। वर्मा जी की कहानियों के कथोपकथन की विवेचना करते समय इस सम्बंध में विचार किया गया है। ग्रामीण-अर्द्ध-ग्रामीण, मुसलमान आदि पात्रों की संवाद-योजना करते समय इसका विशेष ध्यान रखा गया है।

शैली की दृष्टि से विचार करें तो वर्मा जी ने अधिकांशत: वर्णनात्मक शैली का प्रयोग ही किया है। कुछ कहानियाँ अन्य पुरुष शैली में हैं, तो कुछ प्रथम पुरुष शैली में, किन्तु उनमें विश्लेषण की अपेक्षा वर्णन की प्रवृत्ति की प्रधानता रही है। 'दो बाँके', 'बाहर-भीतर', 'समझौता' और 'दिल का दौरा' आदि कहानियों में नाटकीय शैली का भी उचित प्रयोग हुआ है। फिर भी वर्मा जी की कोई एक कहानी एक शैली से बँधकर नहीं रही है। उनमें वर्णनात्मकता, अभिनयात्मकता एवं विश्लेषण का ऐसा सुन्दर समन्वय मिलता है कि उनकी कहानियाँ अत्यंत रोचक, आकर्षक एवं प्रभावशाली बन जाती हैं। एक विद्वान का कथन उपयुक्त प्रतीत होता है -'कहानी कहने का उनका ढंग अत्यंत मनोरंजक, कल्पनापूर्ण और आकर्षक है और उनके द्वारा वे किसी ऐतिहासिक या सामयिक सत्य की व्यंजना करते हैं, जिसमें व्यंग्य का पुट रहता है।'[1]

1- आधुनिक साहित्य : बीसवीं शताब्दी का परिप्रेक्ष्य-डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय (हिन्दी कहानी :उद्भव और विकास)डा० सुरेश सिन्हा, पृ० 533 से उद्धृत)

वर्मा जी की कहानियों का शैव सौन्दर्य या तो अभिधा के ऋजु एवं सीधे-सादे प्रवाह में प्रकट हुआ है अथवा व्यंग्य के मधुर-तिक्त चटखारों में उनकी कहानी-कला विकसित हुई है। वर्मा जी की सीधी सरल शैली की अभिव्यक्ति-क्षमता का एक उदाहरण प्रस्तुत है - 'और मेरी भाभी जो तीस साल की उम्र में बुढ़िया दिखने लगी है, जिसने सिवा दुख और संघर्ष के दुनिया में कुछ जाना ही नहीं, जिसके मुख से हँसी या मुस्कराहट मानो हमेशा के लिए गायब हो चुकी है, जिसके मन में से उमंग मर चुकी है, वह मुझसे कुछ दूर बैठी मेरे बक्स को ठीक कर रही है। उसकी पथराई हुई आँखों में चमक नहीं, भावना नहीं। वह शायद यह नहीं जानती कि यह सब क्या हो रहा है, चुपचाप मशीन की भाँति वह कपड़ों की तह करती है और उन्हें ढंग से रख देती है।'[1] एक निम्न मध्यवर्गीय निराश नारी का कितना सुन्दर शब्द-चित्र है। इसमें न कहीं कृत्रिम अलं आलंकारिकता है और न किसी प्रकार का प्रयास। भाषा की एक गति है, जो कहानीकार की संवेदना को साकार कर देती है।

वर्मा जी की व्यंग्य-प्रधान कहानियों में व्यंग्य-शैली के विभिन्न रूप मिलते हैं, कहीं व्यंग्य प्रत्यक्ष है तो कहीं प्रच्छन्न और कहीं हल्का एवं मधुर तो कहीं तीक्ष्ण। 'प्रायश्चित' कहानी में भोजन भट्ट ब्राह्मण का कथन स्वयं उस पर व्यंग्य करता प्रतीत होता है और मिसरानी का कथन तो व्यंग्यपूर्ण है ही —

'इक्कीस दिन के पाठ के इक्कीस रुपये और इक्कीस दिन तक दोनों बख्त पाँच-पाँच ब्राह्मणों को भोजन करवाना पड़ेगा।' कुछ रुककर पण्डित परमसुख ने कहा-'सो इसकी चिन्ता न करो, मैं अकेले दोनों समय भोजन कर लूँगा और मेरे अकेले भोजन करने से पाँच ब्राह्मण के भोजन का फल मिल जाएगा।'

'यह तो पण्डित जी ठीक कहते हैं, पण्डित जी की तोंद तो देखो।' मिसरानी ने मुसकराते हुए पण्डित जी पर व्यंग्य किया।'[2]

'लाला तिकड़मीलाल' की रूपाकृति एवं वेशभूषा का वर्णन भी व्यंग्य शैली में ही किया गया है, इसमें तिकड़मीलाल के शारीरिक सौष्ठव पर प्रत्यक्ष रूप से व्यंग्य किया गया है, किन्तु उनके कुरते पर व्यंग्य करते हुए वर्मा जी ने अप्रत्यक्ष रूप से वणिक लोगों की कंजूसी पर भी व्यंग्य कर दिया है —

1- मेरी कहानियाँ - पृ० 276

2- वही- पृ० 14

'लाला तिकड़मीलाल करीब तीस वर्ष के गोल-मटोल जवान थे। लाला तिकड़मीलाल के मित्र उनकी उपमा फुटबाल से देते हैं और उनके शत्रु-जिनमें अधिकांश वे लोग हैं जिनसे लाला तिकड़मीलाल अपने पिता द्वारा दिए गये सौ रुपये के बदले में पांच सौ रुपये वसूल कर चुके हैं और अब जिन पर हजार रुपये की डिगरी लदी हुई है - उन्हें भैंसासुर का अवतार मानते हैं। मालूम होता है कि जिस समय ब्रह्मा लाला तिकड़मीलाल को गढ़ने की सोच रहे थे, उनको सामने आबनूस का एक मोटा-सा कुन्दा मिल गया था। उनका मारकीन का कुर्ता अपने सैकड़ों मुखों द्वारा उनसे गिड़गिड़ा कर प्रार्थना कर रहा था -'मालिक, अब तो हम पर दया करो और शान्तिपूर्वक हमें मरने दो। अब हममें शक्ति नहीं है, जो हम तुम्हारी सेवा कर सकें। बारह गण्डे देकर सूद-दर-सूद सहित दस रुपए का काम हम से करवा चुके हो। अब हम समाप्त हो चुके।'[1]

वर्मा जी की जिन कहानियों में सामाजिक कुरीतियों एवं समस्याओं को आधार बनाया गया है उसमें उनकी व्यंग्य-भाषा अत्यंत कठोर एवं ओजपूर्ण हो गयी है। 'बेकारी का अभिशाप' का एक उद्धरण द्रष्टव्य है, जिसमें एक-एक शब्द हमारी सामाजिक कुरूपता एवं असंतुलित शासन-व्यवस्था पर प्रहार करता प्रतीत होता है --

'बाबू जी ने, आप जानते हैं, हम लोगों के लिए क्या छोड़ा ? निर्धनता, झूठा अभिमान और समाज की भयानकता। हम लोग मध्यम समाज के थे, रहन-सहन में तो हम लोग ऊँचे समाज के थे। हम लोग शिक्षित भी थे। और हमारे सामने थी बेकारी, चुप रहकर भूखों मरना और 'उफ' न करना। दुनिया अमीर होने पर तुली हुई है, और शायद इसीलिए निर्धनता भी बढ़ रही है। हम सब आराम चाहते हैं, मान चाहते हैं, प्रतिष्ठा चाहते हैं। यह एक दौड़ है, और यह दौड़ आप जानते ही हैं, भारतवर्ष में संभव नहीं। भारतवर्ष के निवासियों को तो यह चाहिए कि वे भूखों मरें और भगवान का भजन करें। राजा की जय मनावें और एक-दूसरे को खा जाँय।'[2]

इसी प्रकार 'उत्तरदायित्व' की शीला का कथन भी कितना आक्रोशपूर्ण है, जिसमें पुरुष जाति की अहम्मन्यता एवं स्त्री को गुलाम बनाकर रखने की अदम्य लालसा

1- मेरी कहानियाँ- पृ० 39

2- वही- पृ० 160

पर प्रहार किया गया है -`मनुष्य के भविष्य से खेलना, मनुष्य के प्राणों से खेलना। इस पर आपको आश्चर्य होता है, पर मैं आपसे पूछती हूँ, कौन उनसे नहीं खेलता, क्या पुरुष स्त्री के प्राणों से नहीं खेलता, क्या वह स्त्री को गुलाम बनाकर नहीं रखना चाहता ? मिस्टर रंजन, अपने समाज में आप वेश्याओं का स्थान तो जानते ही होंगे। ये वेश्याएँ हैं कौन ? ये वेश्याएँ भी कभी सच्चरित्र युवतियाँ थीं, जो सुख चाहती थीं, मान चाहती थीं और प्रतिष्ठा चाहती थीं ; पर इनमें से प्रत्येक के साथ किसी-न-किसी पुरुष ने सबसे पहले खेला है, और उस पहले खेल से सन्तुष्ट न होकर पुरुष जाति ने उनके जीवन-भर के लिए उन्हें खिलौना बना लिया है। और भी आप सुनेंगे, यह जो नवयुवकों की भीड़ मेरे दरवाजे पर हाजिरी बजाती है, इनमें से अधिकांश मुझे खिलौना बनाकर खेलना चाहते हैं।`[1]

वर्मा जी की `सारिका` में प्रकाशित सभी कहानियाँ व्यंग्य-प्रधान हैं, किन्तु इनमें प्रत्यक्षत: व्यंग्य करने की अपेक्षा प्रच्छन्न रूप से व्यंग्य करने की प्रवृत्ति अधिक दृष्टिगत होती है। पात्रों के कथन, उनके क्रिया-कलाप एवं परिस्थितियां सब मिलकर व्यंग्य व्यंग्य का ताना-बाना बुनते हैं। तथापि कहीं प्रत्यक्ष रूप से किये गये व्यंग्य भी रोचक एवं प्रभावशाली बन पड़े हैं। `मोर्चाबन्दी` में एक सामूहिक आरती-गायन का दृश्य दर्शनीय है -` और तभी लाल संजीवन सिंह को अनुभव हुआ कि वह किसी ऐसे माहौल में आ फँसे हों जहाँ हरेक व्यक्ति चीख रहा था, चाहे वह स्त्री हो, चाहे पुरुष हो। कहीं भैंस रँभा रही थी, कहीं कौवा काँव-काँव कर रहा था, कहीं गधा रेंक रहा था, कहीं बकरी मिमिया रही थी। उन्हें लगा कि उनके कान के पर्दे छिलने लगे हैं और जल्दी ही वे पर्दे फट भी जायेंगे। घबराकर उन्होंने इधर-उधर देखा और फिर घूम कर वह तेजी के साथ वहाँ से भागे। उनका भागना किसी ने देखा, किसी ने नहीं देखा। लेकिन इस आरती-गायन में लोग इस कदर व्यस्त थे कि किसी ने उन्हें रोका नहीं।`[2] इस व्यंग्यात्मक शब्द-चित्र में अद्भुत अभिव्यंजना-क्षमता छिपी है। एक ओर विभिन्न पशु-पक्षियों की बोलियों के द्वारा सामूहिक गायन की असंगति को साकार कर दिया गया है, दूसरी ओर `हरेक व्यक्ति चीख रहा था` में लोगों की चिल्लाकर अपनी भक्ति-भावना का ढोंग रचने की

1- मेरी कहानियाँ - पृ० 169

2- सारिका- मार्च-1975, पृ० 41

प्रवृत्ति की ओर संकेत कर दिया गया है । उपर्युक्त उद्धरण का अंतिम अंश भी रोचक है जिसमें इस ओर संकेत कर दिया गया है कि आरती-गायन में सभी सम्मिलित व्यक्तियों की रुचि नहीं थी, क्योंकि कुछ ने संजीवनसिंह को भागते देख लिया था परन्तु अपनी भक्ति का प्रदर्शन करने की दृष्टि से उन्हें रोका नहीं, रोकने पर उनके भक्तिकार्य में व्यवधान जो उपस्थित हो जाता । इस प्रकार कहा जा सकता है कि वर्मा जी की भाषा-शैली चाहे सरल रूप धारण करके प्रस्तुत हुई हो, चाहे व्यंग्यात्मक रूप में, उसमें रोचकता, सहजता एवं आकर्षण हैं । भाव एवं पात्र के अनुकूल रूप बदलते रहने के कारण उसमें स्वाभाविकता बनी रही है । अपने भावों के सम्प्रेषण के लिए वर्मा जी ने अपनी भाषा में ऐसी शक्ति-प्रतिष्ठा कर दी है कि पाठक को अपने साथ बहा ले जाने के लिए वह पर्याप्त सक्षम है ।

<u>वर्मा जी की कहानियों में वातावरण-सृष्टि :-</u> कहानी में उपन्यास की भांति वातावरण सृष्टि के लिए विस्तृत स्थान उपलब्ध नहीं होता, अत: अत्यंत संक्षेप में घटना तथा पात्रों से सम्बंधित स्थान, काल तथा वातावरण की ओर इंगित कर देने में कहानीकार का कला-कौशल निहित रहता है ।

कुछ विद्वानों ने वातावरण को अत्यंत व्यापक रूप में देखा है, उन्होंने वातावरण को शुद्ध मानसिक क्रिया ' के रूप में देखा है -'वातावरण का बोध शुद्ध मानसिक क्रिया है। ------- कहानी के वस्तु प्रसार के तनाव पर परिव्याप्त जो एक प्रकार का वायुमण्डल अथवा वातावरण होता है, उसे कहानी का शुद्ध मानस आभोग, मानना चाहिए ।'[1] किन्तु ,एक अन्य समीक्षक ने मानस आभोग के साथ वस्तु जगत् को भी महत्व दिया है -'कहानी में इसी भाव-जगत् का चित्रण वातावरण का चित्रण हो जाता है । पर, केवल भाव-जगत् को ही चित्रित करना वातावरण को चित्रित करना नहीं है, बल्कि यथार्थ जगत् का भी चित्रण वातावरण-चित्रण का अंग है ।'[2]

वर्मा जी की कहानियों में वातावरण-सृष्टि की ओर पर्याप्त ध्यान दिया गया है । यद्यपि उनकी कहानियों के लघु रूप-विधान में उसका विस्तार तो नहीं मिलता, किन्तु उनमें सजीवता की न्यूनता नहीं है । डा० जगन्नाथप्रसाद शर्मा ने वातावरण-सृष्टि को तीन

1- हिन्दी कहानी : उद्भव और विकास- डा० सुरेश सिन्हा, पृ० 106

2- हिन्दी कहानी की रचना : प्रक्रिया- डा० परमानन्द श्रीवास्तव, पृ० 127-128

प्रमुख विभागों में रखा है - (1) परिस्थिति-योजना,(2) पीठिका तथा (3) परिवेश।[1] इस विभाजन को आधार मानकर हम वर्मा जी की कहानियों में वातावरण -निर्माण का विवेचन करेंगे।

कहानी में वातावरण सृष्टि के लिए सर्वप्रथम 'परिस्थिति योजना' का महत्व है।'इसका प्रधान उद्देश्य होता है संपूर्ण कथानक के भीतर आई हुई क्रियाओं और परिणामों का तर्कसंगत क्रमन्यास।'[2] इस तथ्य का वर्मा जी ने प्राय: ध्यान रखा है। उनकी कुछ कहानियों में तो वातावरण निर्माण के लिए विशेष यत्न के साथ परिस्थितियाँ उत्पन्न की गयी हैं। कुछ उदाहरणों से इस बात को स्पष्ट किया जा सकता है।'पराजय और मृत्यु' की भुवनेश्वरी देवी, जो पुरुष की गुलामी का घोर विरोध करती थीं और पुरुष को पशु मानती थीं, एक नवयुवक की ओर धीरे-धीरे आकर्षित होती जाती हैं। अपनी भावनाओं के विपरीत उनका आकर्षण किस प्रकार वर्द्धमान होता है, इसके लिए, रमेश से उनका विचार-विमर्श, पार्क में गुण्डों द्वारा उनकी रक्षा, धन्यवाद का पत्र लिखते हुए उसे आमंत्रित करना और तत्पश्चात् घनिष्ठ मैत्री स्थापित होना आदि परिस्थितियों का कहानीकार ने आयोजन किया है और उनके निर्वाह में उसे पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। इसी प्रकार 'विवशता' में लीला द्वारा अपने पति को बचाने की दृष्टि से अपने प्रेमी के रुपये चुराने की घटना का बड़ा सुन्दर अंकन किया गया है।'वरना हम भी आदमी थे काम के','खिलावन का नरक', 'दो रातें', 'बेकारी का अभिशाप','बाहर-भीतर','काश कि मैं कह सकता', ' राख और चिनगारी','क्षमा-याचना', तथा 'समझौता' आदि कहानियों में पात्र के क्रिया-कलापों के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ उद्भूत की गयी हैं। वर्मा जी की 'अनशन','विक्टोरिया क्रॉस','कुँवर साहब मर गए' तथा 'मोरचाबन्दी' जैसी हास्य -व्यंग्य प्रधान कहानियों में भी परिस्थिति -योजना की दृष्टि से कहानीकार विशेष सफल हुआ है।

वातावरण-सृष्टि का दूसरा प्रमुख तत्व 'पीठिका' है, इसे दो भागों में विभाजित किया गया है - प्रकृति-चित्रण तथा स्थानीय चित्र-विधान। वर्मा जी की

1- कहानी का रचना-विधान- डा० जगन्नाथप्रसाद शर्मा, पृ० 169,174,178

2- वही- ,, पृ० 169

कहानियों में प्राकृतिक दृश्य-विधान नगण्य रूप में है। कुछ कहानियों में प्रकृति -चित्रण के अवसर आए हैं - वहाँ भी कहानीकार प्रकृति-सम्बंधी एक-दो बातों को गिनाकर रह गया है सम्पूर्ण दृश्य उपस्थित करने की उसने आवश्यक्ता अनुभव नहीं की। 'राख और चिनगारी' में प्रकृति का संकेत इस प्रकार किया गया है -'और अ जब मैं तुम्हारे साथ चली तब फूलों की चाँदनी हँस रही थी, वसन्तु ऋतु की पुलकन से भरी विकम्पित हवा बह रही थी।'[1] इसकी अपेक्षा 'दो पहलू' कहानी का प्राकृतिक दृश्य अधिक पूर्ण है -'सारी प्रकृति उसकी प्रसन्नता से हँस रही है। चिड़ियाँ चहक रही थीं और मोगरा महक रहा था। सुबह की ठण्डी हवा अपनी मस्ती के साथ सौरभ से अठखेलियाँ कर रही थी और आम के बौरों में बौराई हुई कोयल भी पंचम की अलाप भरने में बेसुध थी।'[2] वर्मा जी की कहानियों में प्राकृतिक दृश्य-विधान के अभाव का एक कारण यह हो सकता है कि उनकी हास्य-व्यंग्य प्रधान कहानि कहानियों में प्रकृति-चित्रण के लिए उपयुक्त स्थितियों का ही अभाव है। हास्य-व्यंग्य के प्रवाह में प्रकृति-चित्रण का न तालमेल ही बैठता है और न ही उसकी आवश्यक्ता महसूस होती है।

पीठिका-निर्माण के लिए द्वितीयत: देशकाल-चित्रण आवश्यक होता है।'कहानी की घटनाएँ, क्रियाएँ इत्यादि किसी स्थान-विशेष पर सिद्ध होती हैं। अत: यदि उस स्थान के विस्तृत विवरणों के साथ उनका संयोग पूर्णतया बैठ जाय तो उसी में एक सौन्दर्य उत्पन्न हो जाता है। विषय के विस्तार के साथ यदि देश-खण्ड का प्रकृत परिचय हो जाय तो विषय बोध में यथार्थता उत्पन्न हो जाती है। ---------स्थानीय सांस्कृतिक बनावट और वस्तु-स्थितियों से एकदेशीयता का जो आभास मिलता है वह रचना को प्रभावोत्पादक बनाने में बड़ा योग देता है।'[3]वर्मा जी के उपन्यासों में तो देशकाल के अत्यंत विशद चित्र प्राप्त होते हैं, यहाँ तक कि उनकी एक क्रमबद्ध श्रृंखला ही वर्मा जी के कुछ उपन्यासों में प्राप्त होती है - इसका विस्तृत विवेचन पहले किया जा चुका है, किन्तु इसके विपरीत उनकी एकाधिक कहानियों को छोड़कर देशकाल के चित्र अ या तो हैं ही नहीं, या अति संक्षिप्त हैं। कुछ कहानियों में संकेत मात्र से काम चलाया गया है।'कुँवर साहब मर गये' एवं 'काश कि मैं कह सकता' तथा 'दो पहलू' शीर्षक कहानियों में स स्वतंत्रता-संग्राम के काल की

1- मेरी कहानियाँ - पृ० 27।
2- वही- पृ० 19।
3- कहानी का रचना-विधान-डा० जगन्नाथप्रसाद शर्मा, पृ० 177

फलक देखने को मिल जाती है। इनमें भी उपन्यासों की भाँति तारीख आदि का उल्लेख करने की आवश्यकता कहानीकार ने अनुभव नहीं की है। संक्षिप्त शैली में तत्कालीन स्थिति का चित्र उपस्थित कर दिया गया है -'सामने आजादी के दीवानों का एक जलूस चला आ रहा था। वह खड़ा हो गया - जलूस धीरे-धीरे उसकी ओर बढ़ रहा था।

उसने पीछे देखा, और वहाँ उसने देखा एक दूसरा जलूस शासन को कायम रखनेवालों का। पुलिस वालों के हाथ में लाठियाँ थीं और कन्धे पर बन्दूकें। रामेश्वर ने न जाने क्यों अपने अंतर में पीड़ा से भरी हुई एक प्रकार की हलचल का अनुभव किया।

दोनों ओर से दोनों जलूस एक-दूसरे की तरफ बढ़ रहे थे। और बीच में रामेश्वर खड़ा हुआ तमाशा देख रहा था।

और फिर दोनों दल अचानक रुक गये, ठीक वहाँ जहाँ रामेश्वर खड़ा था। जलूस वालों में और पुलिस वालों में कुछ कहा-सुनी हुई। रामेश्वर ठीक देख नहीं सका कि क्या हुआ, पर उसे यह आर्डर स्पष्ट सुनाई पड़ा -'जलूस गैर-कानूनी करार दिया जाता है। अगर दो मिनट के अन्दर यह भंग नहीं हो जाता तो बलप्रयोग से भंग कर दिया जाएगा।' और दूसरी ओर से नारे लगे,' भारतमाता की जय, महात्मा गाँधी की जय, स्वतंत्रता की जय।'

लाठियाँ चलीं और उसके बाद गोलियाँ चलीं। और उन नवयुवकों में जो छाती खोलकर गोलियाँ खाने को आगे बढ़ आये थे रामेश्वर भी था।"[1]

इस उद्धरण से स्पष्ट है कि कहानीकार ने पात्र के क्रिया-कलाप एवं परिस्थिति में तारतम्य जोड़ने के लिए पृष्ठभूमि के रूप में कांग्रेस के जलूस और उस पर हुए अत्याचार का चित्रण अवश्य किया है, किन्तु कहानीकार का मुख्य लक्ष्य उसका पात्र रहा है। विशेष परिस्थिति के रूप में ही उपर्युक्त काल का चित्रण किया गया है। वर्मा जी ने ऐतिहासिक कहानियाँ नहीं लिखी हैं। 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी' में एक ऐतिहासिक सत्य का व्यंग्यात्मक शैली में उद्घाटन हुआ है। इसमें मुगलकाल की कथा हीरोजी सुनाते हैं, अतः उसमें ऐतिहासिक परिवेश के यथार्थ चित्रण की अपेक्षा करना व्यर्थ है, फिर भी शाहंशाह शाहजहाँ शाहजादी रोशनआरा, दीवान खास, मुसाहब, हरकारा, जहाँपनाह, मंसबदारों आदि शब्दों

1- मेरी कहानियाँ - पृ० 92

टिप्पणी :- बाइंडिंग की त्रुटि के कारण अगला पृष्ठ (पृष्ठ 560 और 561) अगले दो पृष्ठों के बाद लग गये हैं अतः कृपया संशोधित पृष्ठ 560 और 561 पहले देखने का कष्ट करें। तदुपरांत संशोधित पृष्ठ 562 और 563 देखें।

आक्रोश एवं अनास्था है, जो किसी-न-किसी भाँति उनके साहित्य में अभिव्यंजित हो जाती है। एक विद्वान ने लिखा है -"उन्होंने अपने सपने मिटाए ; अपनी आँखों से मस्ती का पागलपन मिटाया और अनास्था से भरा व्यंग्य उनकी आँखों में झलकने लगा। कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि उनकी दृष्टि में व्यंग्य ही जीवन का एकमात्र सत्य है। काल और परिस्थिति के झोंकों में लगातार डूबते-उतराते रहने के कारण उन्हें कार्य-कारण, क्रिया-प्रतिक्रिया आदि तत्वों का निरीक्षण करने की आदत पड़ गई है। भगवतीबाबू में जीवन-शक्ति का अभाव तो नहीं है, किन्तु जीवन के संघर्ष ने उनमें संशय, अविश्वास और आत्म-तुष्टि की भावना उत्पन्न कर दी है।"[1] यह कथन लगभग सत्य ही है। जहाँ तक आत्म-तुष्टि की भावना ~~उत्पन्न~~ का प्रश्न है, वर्मा जी दूसरों को पीछे छोड़कर आत्मतुष्टि करने में विश्वास नहीं करते। उनका 'व्यक्ति' 'समाज' के साथ आगे कदम बढ़ाने की लालसा लिए रहता है, किन्तु समाज की विकृतियों, रुढ़ियों एवं गलित परम्पराओं को छोड़ देने में, उनका तिरस्कार करने में उन्हें तनिक भी संकोच नहीं होता। इतना ही नहीं उन पर व्यंग्य -वाण छोड़ने से वह कतई चूकते नहीं।

समाज की विभिन्न समस्याओं का अंकन उन्होंने यथार्थवादी ~~य~~ ढंग से किया है। प्रेमचन्द की भाँति उनका कोई विशेष आग्रह आदर्श की ओर नहीं है, किन्तु आदर्श के प्रति एक मोह, एक लालसा उनमें अवश्य है जिसकी अभिव्यक्ति समाज के विभिन्न अंगों पर व्यंग्य करते हुए हो जाती है। एक समीक्षक का कथन सर्वथा समीचीन प्रतीत होता है -"बहुतेरे लोग यह सुनकर अचकचायेंगे कि उनमें मानवता के पतन और उच्छृंखलता के लिए जो आह और उसके विरुद्ध जो विद्रोह है एवं आस्तिकता तथा आदर्शवाद का जो संदेश है तथा इनके विपरीत की जो भर्त्सना है, वही उनकी विशेषता है। नये होते हुए भी वर्मा जी वस्तुत: सनातन सत्य के झंडाबरदार हैं।"[2] वर्मा जी की कुछ कहानियों में आदर्शवादी स्वर स्पष्ट-रूप से मुखर हुआ है। 'एक अनुभव' में वेश्या को रुपये देकर कुछ दिन के लिए इस घृणित कार्य को न करने की प्रेरणा देना स्पष्टतया आदर्शवादी है। 'काश कि मैं कह सकता', 'कुँवर साहब का कुत्ता', 'एक विचित्र चक्कर है' एवं 'नाजिर मुंशी' का मूल स्वर आदर्शवादी ही है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वर्मा जी की कहानियों का उद्देश्य समाज के विभिन्न गलित अंगों का यथार्थवादी चित्र प्रस्तुत करके उसके प्रति पाठक की घृणा, उसका आक्रोश एवं

1- आधुनिक कहानी का परिपार्श्व - डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृ० 62

2- इक्कीस कहानियाँ (भूमिका) सं० रायकृष्णदास, वाचस्पति पाठक, पृ० 26

विरोध उद्दीप्त करना है। उनका यह दृष्टिकोण आदर्श के प्रति उनकी आस्था एवं विद्रूप यथार्थ के प्रति उनकी अनास्था का प्रकाशन करता है।

वर्मा जी के उपन्यासों की ही भाँति उनकी कहानियों में भी नियतिवाद, परिस्थितियों के चक्र एवं अहं के परितोष में उनका विश्वास व्यक्त हुआ है। उनका यह जीवन-दर्शन उधार लिया हुआ नहीं, वरन् व्यावहारिक अनुभवों पर आधारित है अत: उसमें अनुभूति की गहनता मिलती है और उनकी कहानियों में उनका सफल सम्प्रेषण हुआ है।

वर्मा जी की कहानियों के विविध अंगों पर विचार करने के उपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वर्मा जी की कहानियों में कहीं-कहीं लम्बी-चौड़ी भूमिका, चरित्र-चित्रण की लगभग एक-सी प्रणाली तथा एक कहानी में एकाधिक कहानियों को समेटने के रूप में कतिपय शिल्पगत न्यूनताओं का अनुभव हो सकता है, किन्तु उनकी कहानियों में दो ऐसी विशेषताएँ हैं, जिनके कारण उनकी कहानियाँ रोचक, आकर्षक एवं स्मरणीय बन गयी हैं। प्रथम - वर्मा जी की कहानियों की वस्तु एवं विषय के संकलन तथा चुनाव में बड़ी मौलिकता, उद्भावना एवं बाँकापन रहता है, तथा द्वितीय - उनका कहानी कहने का ढंग अत्यंत मनोरंजक एवं कल्पनापूर्ण है। अपने परिवेश से यथार्थ चरित्रों का चयन कर उन्होंने व्यावहारिक मनोविज्ञान एवं अनुभव के आधार पर उनका चित्रण किया है, किताबी ज्ञान और सिद्धान्त को आरोपित या घटित करने की प्रवृत्ति उनकी कहानियों में कहीं नहीं दिखती। इन्हीं सब कारणों से उनकी कहानियाँ अतिशय लोकप्रिय हुई हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि जब वर्मा जी की कहानियाँ अत्यन्त प्रभावोत्पादक, आकर्षक एवं लोकप्रिय सिद्ध हुई हैं, तो क्या कारण है कि वर्मा जी का कहानीकार पीछे छूट गया है और उपन्यासकार आगे निकल गया है। इसके एक कारण का उल्लेख पहले किया जा चुका है। वर्मा जी के साहित्य - सृजन के साथ भावी विकास का प्रश्न भी जुड़ गया है और उन्होंने नि:संकोच स्वीकार किया है कि कहानी की अपेक्षा उपन्यास की 'मार्केट वैल्यू' अधिक है, इसलिए उन्होंने कहानियाँ लिखना लगभग छोड़ दिया है। दूसरा कारण यह है कि उनकी कहानियों में कहानी के भीतर कहानी रखने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है, उदाहरण के लिए 'अनशन', 'रहस्य और रहस्योद्घाटन', 'दो पहलू', 'उन्माद', 'संकट' और 'गुन न हिरानो गुन गाहक हिरानो' आदि कहानियों को देखा जा सकता है। कुछ ऐसी कहानियाँ भी हैं जिनको विस्तृत करके दुबारा प्रस्तुत किया गया है, 'वह फिर नहीं आई' तथा 'रुपया तुम्हें खा गया' ऐसी ही कहानियाँ हैं जिनकी प्रसार भूमि पर

के उपयोग से मुगलकाल की प्रतीति अवश्य करवा दी गयी है।

वर्मा जी की सभी कहानियाँ समाज के विभिन्न वर्गों एवं समस्याओं के चित्रण के उद्देश्य को लेकर लिखी गयी हैं, अत: उन सबका उल्लेख करना अनावश्यक विस्तार करना होगा। कहानीकार का समय और काल को लेकर विशेष आग्रह नहीं रहा है, समाज की विभिन्न विकृतियों एवं कुरीतियों का चित्रण करना तथा उन पर व्यंग्य प्रहार करना ही कहानीकार का अभीष्ट था। इसी लक्ष्य की ओर जाते हुए उसने मध्यमवर्ग की आर्थिक कठिनाइयाँ(राख और चिनगारी), महानगरीय जीवन एवं उसकी यांत्रिकता(राख और चिनगारी, क्षमायाचना) वेश्या समस्या(एक अनुभव,प्यारी), बेकारी की समस्या(बेकारी का अभिशाप), काम समस्या(प्रेजेण्ट्स, बाहर-भीतर,उत्तरदायित्व पराजय अथवा मृत्यु आदि) नेता (गनेसीलाल का रामराज) दाम्पत्य जीवन (समझौता) पूँजीपति(अर्थपिशाच, रंगीलिलाल तीर्थयात्री), जमींदारों की दुर्दशा (संकट, मोर्चाबन्दी) आदि समाज के विभिन्न अंगों का सुन्दर चित्रण किया है।

स्थानीय -वर्णन की दृष्टि से 'दो बाँके' कहानी अद्वितीय है। कहानी की एक-एक पंक्ति लखनऊ की विशेषताओं को हमारी आँखों के समक्ष सजीव कर देती है। इसके अतिरिक्त 'छह आने का टिकट','दो रातें', आवारे तथा क्षमायाचना में कलकत्ता और बम्बई महानगर कार्यक्षेत्र हैं। इनकी स्थानीय विशेषताओं का स्वानुभूतिपरक एवं यथार्थ चित्रण वर्मा जी ने किया है। इसी प्रकार वर्मा जी की कुछ कहानियों में वस्तु-वर्णन भी उच्च कोटि का हुआ है। 'अर्थपिशाच' में एक पूँजीपति के निवास का दृश्य अत्यंत यथार्थ है।[1] 'क्षमायाचना' में बम्बई के एक कमरे का वर्णन[2] तथा 'रंगीलिलाल तीर्थयात्री' में एक अल्पशिक्षित धार्मिक प्रवृत्ति के व्यापारी के भवन का वर्णन[3] वर्मा जी की सूक्ष्म-निरीक्षण -शक्ति का परिचायक है। सर्वाधिक आकर्षक है 'इन्स्टालमेण्ट' में इक्के और इक्केवान का वर्णन, जिसमें इक्के और इक्केवान की एक-एक विशेषता का अत्यंत रोचक वर्णन किया गया है।[4] ऐसे ही अनेक उदाहरण वर्मा जी की कहानियों में उपलब्ध

1- मेरी कहानियाँ- पृ० 173
2- सारिका- मई 1974 पृ० 40
3- सारिका-जुलाई 1974 पृ० 62
4- मेरी कहानियाँ- पृ० 93-94

होते हैं। इस प्रसंग में एक बात की ओर ध्यान आकृष्ट करना हम समीचीन समझते हैं कि वर्मा जी देशकाल के वर्णन में इतना अधिक कहीं भी रमे नहीं हैं कि उनका वर्णन बोझिल और नीरस हो जाय। उनकी कहानी-कला की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि उन्होंने अधिकांशतः आवश्यक -ग्रहण एवं अनावश्यक-त्याग में बड़े संयम एवं विवेक से कार्य किया है।

परिस्थिति-योजना, प्रकृति-सज्जा एवं देश-काल-चित्रण के समन्वय से उनकी एक इकाई स्थापित करने वाला तत्व 'परिवेश' कहलाता है। परिवेश के अत्यंत संश्लिष्ट एवं घनीभूत चित्र तो वर्मा जी की कहानियों में नहीं के बराबर हैं। फिर भी छिट-पुट संकेत एवं उल्लेख से वर्मा जी ने अपने पाठकों को परिवेश के वैशिष्ट्य एवं उसकी यथार्थता की प्रतीति अवश्य करवा दी है। कहानी पढ़ने के पश्चात् वातावरण की अविश्वसनीयता, एवं अबोधता पाठक के मन को आकुल नहीं करतीं। वरन् कहानी के समग्र प्रभाव में से उसका वातावरण स्पष्ट झलकता रहता है।

<u>वर्मा जी की कहानियों का उद्देश्य</u> :- कहानी -कला में उद्देश्य 'वह अंतिम लक्ष्य है, जिसकी प्राप्ति के लिए कहानीकार अपनी कहानी में विविध प्रयोग करता है। समाज की नाना परिस्थितियों, समस्याओं के प्रति कहानीकार का अपना दृष्टिकोण और उनके प्रति उसके निदान, उसके निर्णय आदि कहानी के उद्देश्य बनते हैं, तथा इसी उद्देश्य के भाव-बिन्दु पर कहानी का कथानक, चरित्र और शैली आदि की अवतारणा होती है।'[1] वर्मा जी की सभी कहानियाँ सोद्देश्य हैं। निजी जीवन के संघर्षों एवं अनुभवों ने वर्मा जी को बार-बार व्यक्ति और समाज के सम्बंधों पर सोचने के लिए विवश किया है, उनका यही चिन्तन एवं चेतना उनकी कहानियों में विभिन्न दृष्टिकोणों, पहलुओं एवं रूपों में प्रतिबिम्बित हुई है। अपने प्रारम्भिक जीवन से ही वर्मा जी को अविरल संघर्षों के बीच से गुजरना पड़ा था, इन संघर्षों की झंकृति उनकी कहानियों में स्पष्टतः सुनी जा सकती है। समाज की चक्की में पिसते हुए उन्होंने जाने कितने लोगों को देखा और जाने कितने ऐसे लोगों को देखा जो दूसरों का शोषण कर रहे थे। ऐसे ही अनगिनत लोगों का यथार्थवादी चित्रण करना वर्मा जी की कहानियों का उद्देश्य रहा है। समाज के शोषक तत्वों के प्रति उनमें अपार

1- हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास- डा० लक्ष्मीनारायणलाल, पृ०348

उपन्यास एवं नाटक का सृजन हुआ है। इससे यह स्पष्ट होता है कि समस्याओं एवं चरित्रों के चित्रण में व्यापकता की ओर लेखक का आग्रह रहा है। ऐसा नहीं कि वर्मा जी ने छोटी कहानियाँ लिखी ही नहीं हैं। उनकी अधिकांश कहानियों का रूप-विधान लघु ही है परन्तु थोड़े में बहुत अधिक कह देने की प्रवृत्ति उनकी लगभग सभी कहानियों में दिखती है। व्यापकता की ओर उनका यह झुकाव उन्हें कहानीकार की अपेक्षा सफल उपन्यासकार के रूप में प्रतिष्ठित करता है।